चन्दामामा
माँ-बच्चों का मासिक पत्र
1st DEC. '82

Photo by Pranlal K. Patel

पुरस्कृत
परिचयोक्ति

सावलम्ब

प्रेषक :
देवसिंह राणा, गढ़

मार्गो सोप
भृंगल
आयुर्वेदिक सुगन्धित तैल। मस्तिष्क को शीतलकर केशों को शक्तिशाली बनाता है।
स्नो व क्रीम
दि कैलकटा कैमिकल कं. लि.
कलकत्ता-२९

मीठी मुसकान
लोजंग, पिपरमेंट, टाफी,
चाकलेट आदि जिन्हें
आपके बच्चे पसंद करते हैं।
M. A. P. INDUSTRIES
TONDIARPET : MADRAS-21
MAP

चन्दामामा

संपादक : चक्रपाणी

वर्ष [illegible] : अंक [illegible]

दिसम्बर 1952

एक शुभ-सूचना – नया धारावाही !

चन्दामामा के गत अङ्क में हमारा धारावाही 'विचित्र-जुड़वाँ' जो अठारह महीनों से चल रहा था, समाप्त हो गया। इस अङ्क में हम धारावाही के बदले आठ पृष्ठ की एक कहानी दे रहे हैं। अगले याने जनवरी १९५३ के अङ्क से हमारा नया धारावाही 'रत्न-मुकुट' प्रारम्भ होगा। यह 'विचित्र-जुड़वाँ' से भी ज्यादा आकर्षक और मनोरंजक होगा। रोमांचकारी दृश्यों और मौत से खिलवाड़ करने के साहस-कृत्यों का वर्णन पढ़ कर पल भर साँस रुक जाएगी। आशा ही क्यों: हमारा विश्वास है कि पाठक इस कहानी में खूब रस लेंगे। जनवरी से हम और भी कुछ नए आकर्षण आरम्भ करने की सोच रहे हैं। अतएव इन नए शीर्षकों के बारे में अगर पाठक भी कुछ सुझाने की कृपा करें तो हम उनके बहुत आभारी होंगे। उनके सुझावों को कार्य-रूप देने की हम भरसक कोशिश करेंगे। पाठक जो कुछ लिखना चाहें, सम्पादक के पते पर लिखें। सब के लिए नव-वर्ष शुभ-दायी हो !

साहसी शिकारी

किसी घने जङ्गल में बच्चो!
रहता एक शिकारी।
लक्ष्य न कभी चूकता, इतना
कुशल वह धनुर्धारी।

बालक एक अनाथ हमेशा
साथ रहा करता था।
पीछे लग छाया सा, सारे
कष्ट सहा करता था।

जब जब एक शिकार मारता
चतुर शिकारी वन में,
लड़का ताली बजा उछलता
अति प्रसन्न हो मन में।

देख हिंस्र वन के पशुओं को
वह तनिक न डरता था।
सङ्ग शिकारी के धीरज धर
वह घूमा करता था।

गए शिकार खेलने वन में
एक बार वे दोनों।
देखा—दो भालू आते हैं
यम-दूतों से मानों।

इन्हें देख कर भालू दोनों
गुस्से में गुर्राए।
भय-कम्पित कर सारे वन को
आगे बढ़ते आए।

घात लगा कर एक शिकारी
की दिशि में बढ़ आया;
और दूसरे ने लड़के को
सुलभ लक्ष्य निज पाया।

यह दुर्भाग्य शिकारी का, था
तीर एक ही कर में।
जीवन और मरण की बाजी
वहाँ लगी पल भर में।

तीर चढ़ा कर, लगा निशाना
उस भालू को मारा;
जिसे देख था खड़ा सहम कर
बालक वह बेचारा।

पर भालू दूसरा खड़ा ही
रहा ताकने उसको।
रहा शिकारी खड़ा निहत्था
वैसे ही बेबस हो।

खड़ा रहा भालू कुछ क्षण तक
धीमे से गुर्राता।
फिर जाने, क्या सोचा; चुपके
लौट गया सकुचाता।

सुख की साँस शिकारी ने ली,
सङ्कट बीत गया था।
उसको क्या, जो देख मौत को
करे न नीचा माथा!

मुख-चित्र

करूश देश पर पौंड्रक वासुदेव नाम का राजा राज करता था जो कृष्ण का समकालीन था। भगवान कृष्ण के अनेक नाम थे, जिन में वासुदेव भी एक था। जब भारतवर्ष में चारों ओर उनका यश फैल गया तो 'वासुदेव' नाम से लोग उन्हीं को जानने लगे। इससे पौंड्रक वासुदेव को बड़ी जलन हुई। वह कृष्ण पर बहुत गुस्सा होने लगा।

आखिर उसने अपने एक मन्त्री को बुला कर कहा—'मैंने सुना है कि कोई ग्वालों का छोकरा अपने को वासुदेव नाम से पुकारता है! यह हम कभी बर्दाश्त नहीं कर सकते। वासुदेव नाम हमारे सिवा किसी को शोभा नहीं देता। इसलिए तुम अभी उस कृष्ण के पास जाओ और मेरा सन्देशा कह दो! कहना—'छोकरे! हमें मालूम हुआ है कि तू कुल-मरजाद छोड़ कर अपने को वासुदेव नाम से पुकारता है। तुझे यह शोभा नहीं देता। मालूम होता है, अबोध बालक होने के कारण तुझ से यह चूक हो गई है। अब भी तू यदि पश्चात्ताप प्रगट करे और राज-चिह्न त्याग कर हमारी शरण आए तो हम तुझे क्षमा कर देंगे। यही हमारे राजाधिराज का सन्देश है!' तुम जल्दी जाकर उस कृष्ण से इतना कह दो!'

उस मन्त्री ने जाकर भरे दरबार में भगवान कृष्ण को अपने राजा का यह सन्देश सुना दिया। उसकी बातें सुन कर भगवान खिलखिला कर हँस पड़े। दरबारी सभी दाँतों तले उँगली दबाने लगे। भगवान ने दूत का सत्कार करने के बाद उस सन्देश का यों उत्तर दिया—'दूत! तुम अपने राजा से जाकर कह दो कि युद्ध-क्षेत्र में जब उसकी धूल में लोटती देह को काग, गीध और श्वान आदि नोच नोच कर खाएँगे तभी उसके सन्देश का यथोचित उत्तर प्राप्त होगा।'

दूत ने दौड़ते-दौड़ते जाकर पौंड्रक से यह संवाद कह दिया। तुरन्त उसने अपनी सेना को सिद्ध होने की आज्ञा दी। उसका मित्र काशीराज भी सेना लेकर उसकी सहायता करने आया। दोनों वासुदेवों के बीच घमासान लड़ाई हुई। भगवान ने पौंड्रक वासुदेव और उसके मित्र काशीराज दोनों को मार डाला।

पुराने ज़माने में, रूस देश के किसी गांव में एक धनवान रहता था। उसके एक लड़की थी जिसका नाम 'सोनिया' था। सोनिया की माँ बचपन में ही मर गई थी। इसलिए बाप ने दूसरा ब्याह कर लिया था। इस दूसरी पत्नी से उसके एक लड़की हुई, जिसका नाम 'नटाषा' था।

ज्यों-ज्यों नटाषा बड़ी होती गई त्यों-त्यों उसकी माँ के मन में अपनी सौतेली लड़की के प्रति जलन बढ़ती गई। अब माँ-बेटी दोनों मिल कर सोनिया बेचारी को बहुत सताने लगे।

सोनिया बहुत सुन्दरी और बड़ी शीलवती थी। सौतेली माँ उसे बहुत तकलीफ देती थी, लेकिन वह चूँ तक न करती थी। घर का सारा काम-काज वह हँसते-खेलते कर लेती थी। यह सब उसके पिता को भी मालूम था। लेकिन वह कुछ नहीं कर सकता था।

अन्त में माँ-बेटी दोनों ने तै कर लिया कि किसी-न-किसी बहाने सोनिया को घर से निकाल देना चाहिए। उन्होंने सोचा कि इसे एक ऐसा कठिन काम सौंपना चाहिए, जिसे वह पूरा न कर सके। उसे फिर घर लौटने का मौका नहीं मिले और वह जङ्गलों में मारी-मारी फिरे।

दिसम्बर का महीना था। कड़ाके की सर्दी पड़ रही थी। रूस देश का जाड़ा हमारे देश के जाड़े से कहीं भीषण होता है। जाड़े के दिनों में वहाँ सारी ज़मीन बरफ़ से ढक जाती है। पेड़-पौधों को पाला मार जाता है।

ऐसे समय सौतेली माँ ने सोनिया से कहा—'बेटी! उस पहाड़ पर एक फूल है जो दवाई के काम में आता है। तुम जाकर किसी न किसी तरह वह फूल ले आओ! जल्दी जाओ!' उसने हुक्म दिया। सोनिया तुरन्त खुशी-खुशी घर से निकली।

सरोजकुमारी

बस, माँ-बेटी ने सोचा—'बला टल गई! अब वह कभी घर लौट कर न आ सकेगी!' दोनों फूले न समाए।

बरफ से ढकी जमीन पर बहुत दूर तक चल-चल कर सोनिया अन्त में उस पहाड़ के पास पहुँची। सारा पहाड़ बरफ से ढका हुआ था। अँधेरा हो गया था। कहीं राह नहीं सूझती थी। हाँ, सुदूर ऊँचाई पर कभी कभी एक रोशनी टिमटिमा जाती थी। सोनिया उसी रोशनी पर नजर गड़ाए, सीधे उसी की ओर चढ़ने लगी।

वह ज्यों-ज्यों नज़दीक होती गई त्यों-त्यों रोशनी बढ़ती गई। सोनिया को बहुत अचरज हुआ। वह और भी नज़दीक चली गई। वहाँ एक बहुत बड़ा अलाव जल रहा था। उसके चारों ओर बहुत से अजीब आदमी बैठे आग ताप रहे थे। सोनिया साहस करके सीधे उनके पास चली गई। जाते ही उस ने सब को प्रणाम किया।

वहाँ कुल ग्यारह आदमी थे। एक ओर ऊँचे सिंहासन पर एक बूढ़ा राजा था, जो हाथ में राजदण्ड पकड़े बैठा हुआ था। उसी ने सोनिया का प्रणाम स्वीकार किया।

ग्यारह लोग जो नीचे बैठे हुए थे, उन में से एक ने सोनिया से कहा—'बेटी! तुम कौन हो? इस दुर्गम प्रदेश में जहाँ कभी मनुष्य के चरण नहीं पड़े, इतनी रात गए तुम कैसे चली आईं? हम लोग महीनों के राजा हैं। जनवरी, फरवरी, मार्च, अप्रिल वगैरह हमारे नाम हैं। साल के बारह महीनों में हम एक एक महीना राजा बनते हैं। अभी जो सिंहासन पर बैठे हुए हैं, वे राजा दिसम्बर हैं।'

सोनिया तुरन्त राजा दिसम्बर की तरफ मुड़ी। जलती आग की लाल-लाल लपट में उसका चेहरा कुंदन की तरह दमक उठा। उस चेहरे पर मुसकुराहट थी, मगर वह एक

मासूम उदासी के बोझ से दबी हुई सी थी। उसने अपनी सारी कहानी राजा दिसम्बर से कह सुनाई। तुरन्त राजा दिसम्बर ने उसे धीरज बंधाया और खुद गद्दी से उतर कर नीचे बैठे हुए राजा जून को उस पर बैठने को कहा।

जून ने सिंहासन पर बैठ कर राजदण्ड को एक बार हिलाया तो पहाड़ पर जमी हुई सफेद बरफ पिघल कर पानी बन गई और देखते देखते सारी जमीन हरी-भरी हो गई। पेड़-पौधे लहलहा उठे। खेत फसलों से लद गए। फूल खिल कर विहँसने लगे और वृक्षों की शाखाएँ फूलों के भार से नम्र हो धरती को चूमने लगीं।

यह देख कर राजा जून ने सोनिया से कहा—'बेटी, अब तुम जितने फूल चाहो तोड़ ले जाओ!' खुशी से उछलती सोनिया ने बहुत से फूल तोड़ लिए। राजा जून ने यह वरदान भी दिया कि घर पहुँचने तक उसके फूल मुरझाएँगे नहीं! इस तरह सोनिया की इच्छा पूरी करके राजा जून गद्दी से उतर गया और फिर तापने के लिए आग के पास जा बैठा। तुरन्त राजा दिसम्बर उठे और जाकर फिर गद्दी पर

विराजमान हो गए। बस, सारी हरियाली देखते-देखते छूमंतर हो गई और पहाड़ों पर फिर से बरफ जम गई।

सोनिया ने उन बारहों महीनों के राजाओं को अपना एहसान जताया और विदा लेकर घर लौट पड़ी। सोनिया को सही-सलामत लौटी देख कर माँ-बेटी दोनों दंग रह गईं। उन्होंने स्वप्न में भी नहीं सोचा था कि कभी सोनिया जिंदा लौट सकेगी। ये असमय के फूल उसे कहाँ मिले? यह असम्भव कार्य कैसे संभव हुआ? यह सब कुछ सोचने के बाद वे सोनिया से और भी जलने लगीं! 'बोलो! तुम ये फूल कहाँ से ले आई हो?

बताओ!' उन्होंने गरज कर पूछा। बेचारी सोनिया ने सारा हाल बता दिया। बस, नटाषा के मन में उमंग पैदा हुई कि 'चलो, ये दुर्लभ फूल हम भी ले आएँ!' वह तुरंत घर से चली और अनेक कष्ट उठा कर किसी तरह उन पहाड़ों पर पहुँची। उसे भी दूर से रोशनी दिखाई दी और नज़दीक जाने पर आग के चारों ओर बारहों महीनों के राजा भी दिखाई दिए।

एक राजा ने फिर वही सवाल किया जो उसने सोनिया से किया था। 'जा! जा! तुझे क्या पड़ी है कि मैं कौन हूँ!' नटाषा ने उसे झिड़क दिया और आगे बढ़ चली। वह चार कदम भी नहीं गई थी कि राजा दिसंबर ने अपना राजदंड घुमाया और झट बरफ की चट्टानें उस पर टूट पड़ीं। वह उनके नीचे दब गई और उसका नाम-निशान भी न रहा।

नटाषा की माँ ने बहुत दिन तक उसकी राह देखी। जब वह लौट कर नहीं आई तो वह स्वयं उसकी खोज में चली। वह भी अनेक श्रम उठा कर पहाड़ों पर पहुँची। महीनों के राजाओं ने उससे भी वही सवाल किया। उसने भी अपनी बेटी के जैसा ही जवाब दिया। इसलिए उसकी भी वही हालत हुई जो उसकी लड़की की हुई। दोनों को अच्छी सज़ा मिली।

जब वे दोनों लौट कर नहीं आईं तो सोनिया बेचैन हो गई। वह फिर उस पहाड़ पर गई। तब राजाओं ने उसे सारा हाल कह सुनाया। सोनिया के गिड़गिड़ाने पर उन्होंने माँ-बेटी दोनों को फिर से जिला दिया। जो फूल हमेशा जून में खिलते थे उनको राजा जून ने सोनिया के वास्ते दिसंबर में ही खिला दिया। इसी से इनका नाम 'दिसंबर के फूल' पड़ गया।

जादू की सुराही

एक गरीब लकड़हारा रोज़ जङ्गल जाकर लकड़ियाँ काट कर ले आता और उन्हें शहर में बेच कर अपनी रोज़ी चलाता था। वह बहुत मेहनत करता था; फिर भी उसकी आमदनी तीन आने रोज़ से ज़्यादा न होती थी। तीन आने से उसके परिवार का पेट कैसे भरता! यों अधपेट रहते-रहते उसका जी ऊब गया।

आखिर उसने वह शहर छोड़ देने का निश्चय किया। एक दिन वह उठा और चुपके से घर-बार छोड़ कर चल दिया। जाते-जाते रास्ते में उसे बहुत भूख लगने लगी। लेकिन भूख मिटाने के लिए वह करता क्या! ऐसे ही चलता गया।

और थोड़ी दूर जाने के बाद उसे एक बहुत बड़ा मैदान दिखाई दिया। उस मैदान में बहुत से सिपाही कई कतारों में खड़े कवायद कर रहे थे। वे कह रहे थे—'बुधवार नहीं, सोमवार! सोमवार नहीं, बुधवार! राइट, लेफ्ट, राइट, लेफ्ट!' लकड़हारा कवायद देखते-देखते अचरज से भरा, वहीं खड़ा रह गया।

थोड़ी देर में सिपाहियों की कवायद खतम हो गई। वे लोग खाने बैठे। लेकिन किसी ने लकड़हारे को नहीं बुलाया और न उसे वहाँ से भगाने की ही कोशिश की। बेचारे लकड़हारे के पेट में चूहे दौड़ रहे थे। इसलिए वह चुपचाप जाकर एक परोसे हुए पत्तल पर बैठ गया और जल्दी-जल्दी खाने लगा।

किसी ने कुछ नहीं कहा। लेकिन खा-पीकर, हाथ-मुँह धोकर, जब वह वहाँ से जाने लगा तो सिपाहियों ने उसे पकड़ लिया और कहा—'भैया! तुम इस तरह नहीं जा सकते! तुमने हमारा नमक खाया है। आओ, कुछ काम तो करो!' लाचार हो

कर लकड़हारा भी उनके साथ 'बुधवार नहीं, सोमवार! सोमवार नहीं, बुधवार! लेफ्ट, राइट! लेफ्ट, राइट!' कहते कवायद करने लगा। रात को वह उन्हीं के पड़ाव में सो रहा और सवेरे उठ कर जाने लगा।

लेकिन सिपाहियों ने उसे जाने नहीं दिया। वे लोग बोले—'भई! जो हमारा नमक खाता है उसे कम से कम पाँच साल तक हमारी नौकरी करनी होती है। कभी-कभी तो पचीस साल तक उसे छुटकारा नहीं मिलता। ऐसा ही हमारा कायदा है!'

यह सुन कर लकड़हारा बहुत पछताने लगा। खैर, पाँच साल तक वह वहीं नौकरी करता रहा। ज्यों ही पाँच साल बीत गए, त्यों ही उसने सेनापति के पास जाकर छुट्टी माँगी। सेनापति ने उसकी सेवा से खुश होकर उसे एक कमर-बन्द, एक बंसी, एक पुराना कुर्ता और एक अजीब सुराही, ये चारों चीज़ें भेंट कीं और छुट्टी दे दी। लकड़हारा ये चीज़ें लेकर अपनी झोंपड़ी में चला आया और पहले की तरह लकड़ियाँ बेच कर रोज़ी चलाने लगा।

एक दिन उसे सेनापति की दी हुई चीज़ों की याद आई। उसने कमर-बन्द निकाल कर बाँध लिया और जङ्गल चला गया। उस दिन भी उसे तीन ही आने मिले। वह उन्हें कमर-बन्द के बटुए में डाल कर उदास मन से घर लौट चला।

थोड़ी देर बाद वह बाज़ार गया। एक दूकान के पास जाकर उसने पैसे निकालने के लिए बटुआ खोला। खोलते ही मुँह बाए देखता खड़ा रह गया। क्योंकि बटुए में तीन आनों के बदले तीन अशर्फ़ियाँ थीं। लकड़हारा अचरज से भर गया। वह चुपके से घर लौट गया।

दूसरे दिन भी उसे वही तीन आने मिले। लेकिन कमर-बन्द के बटुए के प्रभाव से वे अशर्फ़ियाँ बन गए। तब कहीं लकड़हारे की समझ में आया कि इस बटुए की कृपा से उसकी तकदीर खुल गई है।

बटुए में रखा हुआ हरेक आना एक अशर्फ़ी बन जाता था। फिर लकड़हारा धनवान क्यों न हो जाता! देखते-देखते वह लखपती बन गया।

कुछ साल तक सुख से जीने के बाद लकड़हारा चल बसा। अब उसका लड़का लकड़ियाँ बेचने का काम करने लगा। उसे भी बहुत मेहनत करने पर रोज़ तीन आने पैसे मिलते थे। ज़िन्दगी बड़ी मुश्किल से कट रही थी।

एक दिन वह बहुत दुखी होकर माँ के पास गया और बोला—'माँ! बहुत मेहनत करने पर भी दिन भर में तीन आने से ज्यादा नहीं कमा पाता हूँ। पिताजी भी तो लकड़ियाँ बेचते थे। मगर न जाने, कहाँ से अशर्फ़ियाँ उठा लाते थे! ज़रूर इसमें कुछ-न-कुछ रहस्य छिपा हुआ है। क्या तुम इसके बारे में कुछ नहीं जानतीं?' इतना कह कर वह हठ करने लगा।

माँ ने बहुत कोशिश की कि कोई बहाना करके टाल दे। लेकिन बेटे ने ज़िद न छोड़ी। बोला—'जब तक तुम यह भेद बताओगी नहीं, तब तक मैं मुँह में पानी भी नहीं डालूँगा।'

आखिर माँ का दिल ही था, पिघल गया। वह बेटे को एक छोटी कोठरी में ले गई और बोली—'लो, बेटा! यह सब तुम्हारे पिता की कमाई है। मैं नहीं चाहती थी कि तुम मुफ़्त का माल उड़ाओ और निकम्मे हो जाओ। इसलिए मैंने इतने दिनों से तुम्हें कुछ नहीं बताया। अब तुम्हारी मरज़ी!'

उस कोठरी में अशर्फ़ियों के ढेर लगे हुए थे। बस, उन्हें देख कर लड़के की आँखें चौंधिया गईं। उसने सोचा—'मेरे पास इतना रुपया है! तब तो मैं राजा की बेटी से भी ब्याह कर सकता हूँ।' यह सोच कर दूसरे ही दिन लकड़हारे के लड़के ने अपने एक आदमी द्वारा राजा को खबर भेजी कि वह राजकुमारी से शादी करना चाहता है।

यह सन्देशा सुन कर राजा ठठा कर हँस पड़ा। 'अच्छा! मैं अपनी बेटी उसे जरूर ब्याह दूँगा। लेकिन पहले एक सौ बोरे अशर्फ़ियां नज़राने में भेजने को कहो!' राजा ने मज़ाक के तौर पर दूत से कह दिया।

राजा का सन्देश सुन कर लकड़हारे का लड़का बोला—'अच्छा, महाराज की जो इच्छा! उनकी आज्ञा का पालन करूँगा।' यह कह कर उसने पिता की कमाई अशर्फ़ियां बोरों में भरवाईं।

निन्नानवे बोरे भर गए। लेकिन एक बोरा आधा खाली रह गया। तब लड़का अपनी माँ के पास जाकर बोला—'माँ! पिताजी की अशर्फ़ियों से निन्नानवे बोरे भर गए। लेकिन एक बोरा खाली रह गया। बताओ! और कहीं कुछ अशर्फ़ियां छिपा तो नहीं रखी हैं?'

माँ ने उसे बहुत समझाया कि और कहीं अशर्फ़ियां नहीं हैं। लेकिन वह हठ करने लगा। तब माता ने पिता का कमर-बन्द लाकर उसे दे दिया और उसका भेद बता दिया। उस कमर-बन्द के प्रभाव से लकड़हारे के लड़के ने कुछ ही दिनों में अशर्फ़ियां जमा करके वह बोरा भी भर दिया और सौ बोरे राजा के पास भेज दिए।

सौ बोरे अशर्फ़ियां देख कर राजा दंग रह गया। उसने लड़के को बुलवाया और

कहा—'बेटा! हम अपने वादे के मुताबिक राजकुमारी का ब्याह तुम से करने को तैयार हैं। हमें कोई एतराज नहीं। लेकिन पहले यह तो बताओ कि इतने थोड़े समय में तुम सौ बोरे अशर्फियां कैसे जमा कर सके! यह भेद मालूम होते ही ब्याह की तैयारियां हो जाएंगी।' राजा ने बनावटी दुलार दिखाते हुए पूछा।

लकड़हारे के लड़के ने राजा की सारी बातें सच मान लीं। उसने झट कमर-बन्द का भेद बता दिया। भेद जानते ही राजा बोला—'अरे अभागे! मैंने तो समझा था कि यह सब तेरी बहादुरी है। लेकिन यह सब तो कमर-बन्द की करामात है; फिर तेरी बड़ाई क्या रही! यह कमर-बन्द तो हमारे जैसे राजाओं के पास रहने लायक है। तुझ जैसे अभागे इसे लेकर क्या करेंगे!' यह कह कर उसने सिपाहियों को हुक्म दिया कि कमर-बन्द छीन लो! सिपाहियों ने ज़बर्दस्ती लकड़हारे के लड़के का कमर-बन्द छीन लिया और उसे धक्का देकर निकाल दिया। बेचारा अब क्या करता! रोता-पीटता घर लौटा और सिर झुका कर मां से सारा हाल कह सुनाया।
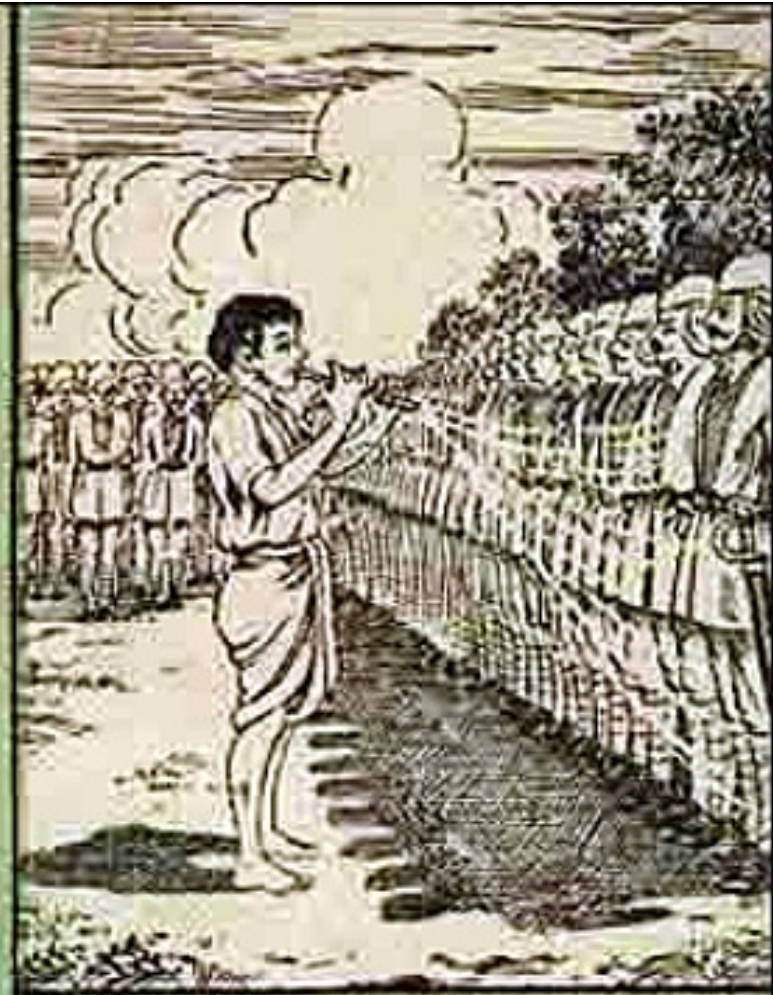
इकलौते बेटे को यों रोते देख कर मां से न रहा गया। उसने बंसी लाकर उसे दे दी और बोली—'बेटा! यह बंसी तुम्हारे पिता की कमाई है। जाओ, इसे ले जाओ! कौन जाने, शायद इससे तुम्हारी किस्मत पलट जाए!'

लड़का बाहर जाकर बंसी बजाने लगा। एक बार बजाते ही एक सिपाही उसके सामने आकर खड़ा हो गया। दुबारा बजाई तो दूसरा सिपाही आ खड़ा हुआ। इस तरह जितनी बार उसने बंसी बजाई उतने सिपाही आ खड़े हुए।

इस तरह लकड़हारे के लड़के ने एक बड़ी सेना खड़ी कर ली। उसकी सेना को

देख कर लोग डरने लगे। जब यह खबर राजा के पास पहुँची तो उसने तुरन्त उसे अपने पास बुलाया और कहा—'बेटा! हमें नहीं मालूम था कि तुम में ऐसी महत्ता है! इस बार मैं ज़रूर अपनी बेटी का ब्याह तुम से कर दूँगा। हाँ, पहले यह तो बताओ कि तुमने ऐसी बड़ी सेना कहाँ से इकट्ठी कर ली?'

राजा की बातें सुन कर लड़का फूल कर कुप्पा हो गया। झट उसने बंसी का भेद खोल दिया। बस, राजा ने तुरंत सिपाहियों से कह कर उसे खूब पिटवाया और उसकी बंसी छीन ली।
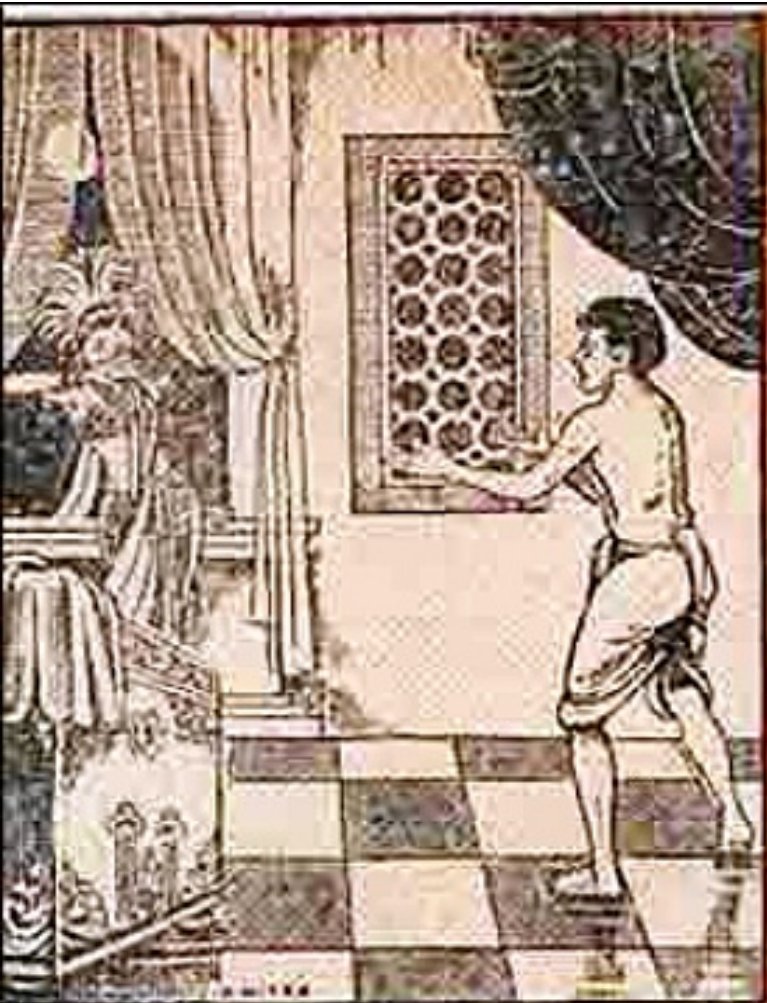
लड़का फिर रोता-पीटता माँ के पास गया। इस बार माँ ने अपने पति का कुर्ता उसे दिया और बोली—'बेटा! अब तो सिर्फ़ यही बचा है। इसे भी ले जाओ और अपनी किस्मत आज़मा लो!'

उस कुरते में ऐसा प्रभाव था कि उसे पहन लेने पर मनुष्य जहाँ जाना चाहे, तुरन्त वहाँ पहुँच जाता था। लड़के ने ज्यों ही कुरता पहना, त्यों ही वह राजा के किले में जा पहुँचा। वहाँ जाकर उसने कुर्ता उतार दिया। नहीं तो घर का ख्याल आते ही वह फिर घर पहुँच जाता। किले में घुस कर लड़का सीधे राजकुमारी के महल में गया। वह दूर से उसे देख कर बहुत खुश हुआ और इस तरह रोज़ उसे देखने आने लगा। एक दिन जब मन में उमङ्ग उठी तो उसने जाकर राजकुमारी को अपना परिचय दे दिया। यह देख कर राजकुमारी डर गई और उसने अपने पिता से सारा हाल कह दिया।

यह हाल सुन कर राजा ने उस कुरते को चुराने के लिए एक नौकर को भेजा। वह नौकर राजकुमारी के कमरे में, एक सन्दूक में छिप गया। ज्यों ही लकड़हारे के लड़के ने आकर, कुर्ता उतार कर वहाँ रखा, त्यों

ही वह उसे उठा ले भागा। तुरन्त राजा के नौकरों ने आकर उस लड़के को घेर लिया और पकड़ कर खूब लताड़ा।

लड़का किसी तरह जान बचा कर भागा और जाकर माँ के पैरों पर गिर पड़ा।

इस पर माँ को बहुत तरस आया। उसने अपने पति की आखिरी चीज़ याने सुराही उसको दी और बोली—'बेटा! यह सब से आखिरी चीज है। अब इसे ले जाओ! भगवान की कृपा से तुम्हारे सारे दुख दूर हो जाएँगे।'

लकड़हारे का लड़का वह सुराही लेकर पहाड़ों में भाग गया। जाते-जाते उसे एक सुन्दर बगीचा दिखाई दिया। वहाँ पेड़ों पर तरह-तरह के फल लगे हुए थे। फल इतने नीचे लटक रहे थे कि हाथों से ही तोड़े जा सकते थे। लड़के ने एक बेर के पेड़ के पास जाकर एक फल तोड़ कर खाया। तुरन्त उसके सिर पर भेड़ों की तरह टेढ़े-मेढ़े सींग निकलने लगे।

यह देख कर वह भौंचक रह गया। आखिर अमरूद के पेड़ के पास जाकर, उस ने एक अमरूद तोड़ कर खाया। अमरूद खाते ही उसकी सूरत गधे की जैसी हो गई और वह रेंकने लगा। उसके नज़दीक ही मैदान में हरी-भरी घास उग रही थी। वह उसे चरने लगा। घास चरते ही वह फिर आदमी बन गया।

बस, उसने वे फल तोड़ लिए और घास उखाड़ कर अपनी जेब भर ली। फिर एक जोगी का भेस बना कर शहर में लौट आया। उस अद्भुत जोगी को देख कर बहुत से लोग दर्शन करने के लिए आने लगे।

वह जोगी एक पेड़ के नीचे आसन लगा कर बैठ गया। बहुत से लोग आकर उसकी सेवा करने लगे। उनमें राजा के कई

दरबारी और नौकर भी थे। उन सब की जोगी के ऊपर भारी भक्ति जम गई। जोगी ने उन सब को एक-एक बेर खाने को दिया। तुरन्त उनके सिरों पर भेड़ों के से सींग निकल आए। यह देखते ही वे सब उस जोगी के पैरों पर गिर पड़े और निहोरा करने लगे—'महाराज! हम से कौन सा अपराध हुआ कि हमें आपने ऐसी सजा दी! कृपा करके यह शाप लौटा लीजिए!' यह कह कर वे गिड़गिड़ाने लगे।

'तुम्हीं लोगों ने मार-पीट कर मेरे कमरबन्द, बंसी और कुर्ता छीन लिए थे। जाओ, मेरी वे चीजें तुरन्त ले आओ और राजा से कह दो कि राजकुमारी से मेरा ब्याह कर दे। तभी तुम लोगों के माथे के ये सींग हट जाएंगे।'

वह जोगी बोला। यह सुनते ही उन सब ने पहचान लिया कि यह तो कोई जोगी नहीं; वही लकड़हारे का लड़का है।

लाचार होकर वे सभी राजा के पास गए और बहुत कुछ कह-सुन कर उस की चीजें वापस दिलवा दीं। इतना ही नहीं; धन-धान के साथ राजकुमारी से उसका ब्याह भी हो गया। तब कहीं जाकर लड़के ने उन्हें घास खिलाई और उनके सिर के सींग दूर हुए।

जब उस राज की प्रजा को लकड़हारे के लड़के की महानता मालूम हो गई तो उन्होंने राज में बगावत कर दी और उस बूढ़े राजा को गद्दी से हटा कर लकड़हारे के लड़के को उस पर बिठा दिया। लकड़हारे के लड़के ने राजा को एक अमरूद खिला दिया। अमरूद खाते ही वह राजा एक गधा बन गया और रेंकता हुआ जङ्गलों में भाग गया। इस तरह राजा को अपनी करनी का अच्छा फल मिल गया। इसी से कहा है:—

'जो जस करइ सो तस फल चाखा!'

भारत में मुगल बादशाहत की नींव डाली थी बाबरशाह ने। बाबर बहुत दिलेर आदमी था। नहीं तो वह इतने बड़े मुल्क को जीत कर, यहां अपनी बादशाहत कैसे जमाता!

हां, यह तो सच है कि नींव डालने से ही इमारत खड़ी नहीं हो जाती। सल्तनत की हिफाज़त के लिए बादशाह को बहुत होशियार रहना पड़ता है। क्योंकि दुनिया में बादशाहों के दोस्तों से दुश्मन ही ज्यादा होते हैं। वे हर दम इस ताक में बैठे रहते हैं कि कैसे उसकी सरकार को जड़-मूल से उखाड़ फेंकें! बाबर का कलेजा फौलाद की तरह मजबूत था। इसलिए उसने दुश्मनों की कोई परवाह न की और बेखौफ हुकूमत चलाता रहा।

बाबर के नौकरों में एक का नाम था अली। बादशाह उस पर बहुत भरोसा रखता था। अली भी मज़े से खा-पीकर मटरगश्ती करता और बादशाह के मन-बहलाव के लिए तरह-तरह की बातें बनाता रहता।

एक दिन अली ने बादशाह से कहा—'जहाँपनाह! अल्लाह की हजूर पर ठण्डी नज़र है। इसी से उन्होंने आप को यह बादशाहत दी कि ऐशो-आराम में आप के दिन गुज़रें!'

तब बादशाह बोला—'तो अली, तुम्हारा ख्याल है कि बादशाह ऐशो-आराम में दिन गुज़ारता है और उसे किसी बात की फिक्र नहीं होती!'

अली ने जवाब दिया—'इसमें कोई शक है हुजूर! सिर्फ इसी मुल्क में नहीं, बल्कि सारी दुनिया में आपके जैसा सुखी आदमी कोई है!' यह सुन कर बादशाह सोच में पड़ गया। आखिर उसने कहा—'अच्छा, अली! कल मैं तुम्हें एक दिन

अहमद रऊफ

के लिए बादशाह बना देता हूं ! बादशाह बन कर तुम खुद ही देख लोगे कि उसमें कैसा मज़ा आता है !' अली को अपने कानों पर आप ही यकीन न हुआ। 'हुजूर ने क्या फरमाया ! क्या सच ही वे कल मुझे बादशाह बनाएंगे !' उसने एक दूसरे नौकर से पूछा जो वहीं खड़ा था। उस नौकर ने कहा—'हां ! भैया !' अब अली खुशी के मारे पागल सा हो गया। अब तो उसे कोई शक न रहा।

थोड़ी ही देर में ढिंढोरा सुनाई पड़ा कि 'कल एक दिन के लिए जनाब अलीखान बादशाह बनेंगे !'

बड़े-बड़े अमीर-उमरावों ने अचरज के साथ यह खबर सुनी।

'कब सवेरा हो और कब ताज मेरे सिर की रौनक बढ़ाए !' इस धुन में लगे हुए अली को उस रात बिल्कुल नींद न आई। सच पूछा जाए तो ऐसे समय किसी को नींद कैसे आएगी !

पौ फटते ही बाबर ने अली को बुला भेजा। उसने उसे शाही पोशाक पहना कर तख्त पर बिठाया और अपने हाथों से ताज उसके सिर पर रख दिया। उसके बाद एक बड़ी भारी दावत हुई। फिर दरबारी लोग आए और एक-एक कर अली को बन्दगी बजा कर, नज़राने देकर चले गए। अली की खुशी का ठिकाना न रहा।

दोपहर हुई। अली बाबर के साथ खाने बैठा। बहुत से खानसामे सोने की तश्तरियों में तरह-तरह की खाने की चीज़ें लेकर कतार में खड़े हो गए। अली ने वैसी चीज़ें कभी सपने में भी नहीं देखी थी।

खास कर इनमें 'दिलखुश' नाम की एक मिठाई थी जो वह बहुत दिनों से खाना चाहता था। आज उसे वह मौका मिला। उसने मिठाई तश्तरी में से उठाई और मुँह

में डालने ही जा रहा था कि उसकी नज़र एक तलवार पर पड़ गई जो ठीक उसी के सर पर झूल रही थी। चमाचम चमकती वह पैनी तलवार रस्सी से नहीं लटक रही थी। वह झूल रही थी एक महीन बाल के सहारे! उसे देखते ही ऐसा लगता था कि हवा के एक हल्के झोंके से ही टूट कर वह उसके सिर पर आ गिरेगी।

यह देख कर अली के होश-हवास उड़ गए। हाथ की मिठाई हाथ में ही रह गई! माथे पर पसीना छूटने लगा और सारा बदन थर-थरा उठा। वह सोचने लगा—'कहीं यह तलवार टूट पड़ी, तो पल में मेरे प्राण-पखेरू उड़ जाएँगे!'

'तोबा-तोबा! मुझे न चाहिए यह तख्त, और न चाहिए यह ताज! मैं ऐसी बादशाहत नहीं चाहता। मुझे अभी यहाँ से जाने की इजाज़त दीजिए!' यह कह कर वह वहाँ से उठने लगा। लेकिन बाबर ने उसे वहाँ से हिलने न दिया। उसने कहा—'अली! अल्लाह ने बादशाह को जो ऐशो-आराम दिया है, उसका मज़ा कल सवेरे तक तो तुम्हें चखना ही होगा!' अली गिड़गिड़ा कर मिन्नत करने लगा—'हुजूर! मेरे सिर पर तलवार झूल रही है! फिर मैं ऐश-आराम क्या करूंगा, खाक!'

तब बाबर मुस्कुरा कर बोला—'अली! यही है बादशाह की ज़िन्दगी! तुम्हारे सिर पर जिस तरह तलवार झूल रही है, उसी तरह बादशाहों के सिर पर हमेशा मौत नाचती रहती है!'

'लेकिन आप तो मज़े में रहते थे! आप को तो मैंने कभी उदास नहीं देखा!' अली ने हिम्मत करके पूछा।

'दिलेर लोग मौत से नहीं डरा करते। वे ज़िन्दगी का राज़ जानते हैं। इसलिए वे मामूली आदमियों की तरह हमेशा मौत को

देख कर काँपते नहीं रहते।' बादशाह बाबर ने जवाब दिया।

'अच्छा! हुजूर! अब मुझे यहाँ से जाने दीजिए! कौन जाने, वह तलवार कब मेरे सिर पर टूट गिरे!' अली हाथ जोड़ कर गिड़गिड़ाने लगा। 'नहीं, नहीं! ऐसा नहीं हो सकता। चौबीस घण्टों तक तुम्हें बादशाहत करनी ही होगी।' यह कह कर बादशाह ने सिपाहियों को बुलाया और वहाँ पहरा बिठा कर चले गए।

बेचारे अली के मुँह से एक लफ़्ज़ भी न निकला। चौबीस घण्टे किसी तरह जान हथेली पर रख कर, उसने उस गद्दी पर बिताए। मिठाई तो दूर रही; पानी की एक बूँद भी उसके गले से न उतरी। सब चीज़ें जहाँ की तहाँ रखी रह गईं।

'या अल्ला! तूने मुझे कैसी सज़ा दी!' यह कह कर वह अपनी बेवकूफ़ी पर पछताता, एक-एक पल एक-एक जुग के समान बिताने लगा। ज्यों ही चौबीस घण्टे पूरे हुए, खुदा को शुक्रिया देकर वह वहाँ से उठ भागने लगा। इतने में बाबर वहाँ आ गया। 'अपने दुश्मन को भी कभी यह ताज सिर पर रखने की सज़ा न मिले!' यह कह कर अली ने ताज बादशाह के सिर पर रख दिया। बाबर ने मुसकुरा कर कहा—'अली! तुम नाहक डर गए! बाल महीन होने पर भी बहुत मज़बूत होता है। उससे बँधी हुई चीज़ कभी टूट कर नहीं गिरती! तुम्हारी बुज़दिली ने ही तुम्हें हैरान कर दिया था। बहुत से लोग बादशाह को देख कर डाह करते हैं। वे सोचते हैं कि वे ही बादशाह क्यों नहीं बने। बेचारे नहीं जानते कि बादशाह बनने की लियाक़त उन में नहीं है!' तब अली बोला—'हुजूर का कहना बिलकुल ठीक है! दिलेर आदमी ही ताज का वज़न ढो सकता है।' यह कह कर, वह बन्दगी बजा कर वहाँ से चला गया।

काशी नगरी के एक राजा का नाम शकुन्तन था। वह बहुत बड़ा राम-भक्त था। संसार के सब लोग उसकी भक्ति की बहुत प्रशंसा करते थे। धीरे-धीरे उस राजा को यह घमण्ड होने लगा कि संसार में उससे बड़ा राम-भक्त कोई है ही नहीं।

जब नारद मुनि ने राजा शकुन्तन के घमण्ड की बात सुनी तो उन्होंने सोचा—'किसी-न-किसी तरह इसका घमण्ड चूर कर देना चाहिए। नहीं तो यह इसी तरह चौपट हो जाएगा।' आखिर बहुत सोचने के बाद उन्हें एक उपाय सूझ गया।

कुछ दिन बाद उस राज के लोग झुंड-के-झुंड राजा के पास आने और विनती करने लगे—'भगवन्! जङ्गली जानवर हमें बहुत सता रहे हैं। आप हमारी रक्षा कीजिए।'

उनकी विनती सुन कर राजा जङ्गलों में शिकार खेलने चला गया। दोपहर तक शिकार खेलते-खेलते वह बहुत थक गया। तब नजदीक के एक तपोवन की ओर चल पड़ा। उस समय उस तपोवन में बहुत से ऋषि-मुनि एकत्र हो गए थे। राजा के पूछ-ताछ करने पर पता चला कि वह विश्वामित्र मुनि का आश्रम है। राजा आश्रम के अन्दर चला गया। विश्वामित्र ने राजा को आया देख उठ कर स्वागत किया और कुशल-प्रश्न पूछा। कुछ देर तक आराम करने के बाद राजा वहाँ से चलने लगा। विदा लेते समय उसके मन में एक सन्देह पैदा हुआ। वहाँ जितने ऋषि-मुनि थे, सभी महान तपस्वी थे। कोई किसी से कम नहीं था। फिर वह पहले किसे प्रणाम करे और किस से विदा ले! आखिर उसने सोचा—'सब से आगे तो वशिष्ठ जी ही बैठे हुए हैं। इसलिए पहले इन्हीं को प्रणाम करूँ।' यह सोच कर वह बोला—'वशिष्ठ जी! मुनिगण!

महादेव पांडे

अब आज्ञा दो; मैं विदा लेता हूँ!' नारद मुनि वहीं बैठे हुए थे। उन्हें मौका मिल गया। वे तुरन्त विश्वामित्र के कान भरने लगे—'गाधि-पुत्र! इस राजा का घमण्ड तो देखो! तुम्हारे आश्रम में आकर यह विदा माँगता है वशिष्ठ जी से! क्या इसकी धृष्टता क्षमा कर दोगे तुम?'

विश्वामित्र भड़क गए। बोले—'ठीक कहते हो नारद! घमण्ड के मारे इसका विवेक मारा गया है। साधारण शिष्टता भी भूल गया है यह। अच्छा, ठहरो! पल भर में इसका घमण्ड चूर किए देता हूँ।' यह कह कर झट से भगवान रामचन्द्र के पास चले गए। वहाँ जाकर अत्यन्त आवेश में बोले—'राम! एक बहुत जरूरी काम आ पड़ा है! पूरा करने का वचन दो तो बताऊँ!' भगवान रामचन्द्र जी आश्चर्य में पड़ कर बोले—'गुरुवर! यह आप क्या कहते हैं? क्या मैंने कभी आपकी आज्ञा टाली है? यों संकोच क्यों कर रहे हैं?'

यह सुन कर विश्वामित्र ने कहा—'सुनो, राम! आज काशीराज शकुन्तन ने मेरा बड़ा भारी अपमान कर दिया है! जब तक तुम अपने अमोघ बाण से उसका कलेजा नहीं छेद दोगे, तब तक मुझे चैन नहीं मिलेगा।'

विश्वामित्र की बातें सुन कर भगवान सचमुच सोच में पड़ गए। उनके सामने एक बड़ी भारी समस्या खड़ी हो गई थी। एक ओर राजा शकुन्तन उनका बड़ा भारी भक्त था। इधर गुरु की आज्ञा टाली नहीं जा सकती थी! आखिर किसी तरह उनके मुँह से निकला—'अच्छा!' इतना सुन कर विश्वामित्र चले गए।

उधर कलह-प्रिय नारद ने यह खबर राजा शकुन्तन को पहुँचा दी! नारद ने उससे कहा—'राजन्! तुम्हारे इष्टदेव भगवान

रामचन्द्र जी ही तुम्हारी जान लेने आ रहे हैं।' तब राजा ने कहा—'मुनिवर, इस सङ्कट से बचने का कोई उपाय नहीं है?' तब नारद ने राजा को एक उपाय बता दिया।

राजा शकुन्तन झट अञ्जना देवी के आश्रम में चला गया और 'रक्षा करो! रक्षा करो!' चिल्लाने लगा। उसका आर्त-नाद सुन कर अञ्जना देवी दौड़ी आईं। 'भैया! डरने की कोई बात नहीं। बताओ तो सही, तुम पर कैसा सङ्कट आ पड़ा है?' उन्होंने राजा को ढाढस बँधा कर पूछा। तब राजा ने सारा हाल कह सुनाया।

राजा की बातें सुन कर अञ्जना देवी भी सोच में पड़ गईं। 'हाय! यह तो बहुत बुरा हुआ! अब तो भगवान रामचन्द्र से लड़ाई है! भला, शरण में आए हुए इस राजा की रक्षा अब कैसे की जाए!'

देवी यों सोच ही रही थीं कि वीर-पुत्र हनुमान वहाँ आ पहुँचे। माँ को उदास देख कर वे बोले—'माँ! तुम्हारा चेहरा आज उतरा हुआ क्यों है? मेरे रहते तुम्हें चिन्ता किस बात की? तुम्हारे लिए मैं क्या नहीं कर सकता? कहो तो आसमान के तारे भी तोड़ लाऊँ!'

अञ्जना देवी आँसू बहाती हुई बोलीं—'बेटा! मैंने अनजाने इस राजा को अभय दे दिया है। मुझे नहीं मालूम था कि इस के कारण भगवान रामचन्द्र जी से युद्ध करना पड़ेगा। तुम्हीं कहो, अब क्या किया जाए?'

सब कुछ सुन कर हनुमान ने कहा—'माँ! तुम सोच न करो! जिस तरह राम का बाण अमोघ है, उसी तरह तुम्हारा वचन भी। मैं तुम्हारा वचन जरूर पूरा करूँगा, चाहे उसके लिए भगवान रामचन्द्र से ही लोहा क्यों न लेना पड़े! जैसे गुरु की आज्ञा भगवान रामचन्द्र के लिए शिरोधार्य है, वैसे ही मेरे लिए तुम्हारी आज्ञा भी!'

वे शेर की तरह गरज कर बोले। इतने में भगवान रामचन्द्र शकुन्तन को खोजते हुए वहाँ आ पहुँचे।

'हनुमान! राजा शकुन्तन कहाँ है? उसने गुरु विश्वामित्र का अपमान किया है। मुझे उसका वध करना है। छोड़ दो उसे!' भगवान ने आदेश दिया। 'देव! यह तो संभव नहीं दीखता। माता ने उस को अभय-दान दे दिया। अब तो मेरे जीते-जी कोई उस का बाल भी बाँका नहीं कर सकता।' हनुमान ने बड़ी नम्रता से कहा।

'अगर राम का बाण अमोघ हो तो वह काशीराज का कलेजा छेद दे!' इतना कह कर राम ने तब तीर छोड़ दिया।

'और अगर यह हनुमान सच्चा राम-भक्त हो, तो हे बाण! इस काशीराज पर कोई आँच न आए!' यह कह कर हनुमान ने दोनों हाथ जोड़ कर उस बाण को भक्ति-पूर्वक प्रणाम किया। वायु-वेग से सनसनाता हुआ राम-बाण हठात् हवा में टँग गया। जैसे उस पर किसी ने जादू कर दिया हो!

जैसे ही राम का अमोघ बाण लम्बित हुआ, तीनों लोक में भीषण हाहाकार मच गया। देवता और ऋषि-मुनि सभी दौड़े आए। 'यह तो भक्त और भगवान का युद्ध है!' वे कहने लगे। आखिर सबों को मालूम हो गया कि यह सब नारद जी की महिमा है! 'कुछ भी हो! राम का तीर कभी व्यर्थ नहीं होता।' भगवान बोले। 'बहुत अच्छा! तो वह मेरे वक्षस्थल को बींधे!' हनुमान बोले। बस, राम-बाण हनुमान की छाती से पार हो गया। हनुमान के विदीर्ण वक्ष में सब लोगों को श्री सीता-राम की दिव्य मूर्तियाँ दिखाई दीं। सब लोग दंग रह गए। राजा शकुन्तन ने लज्जा से शीस झुका लिया और सोचा कि यह तो मुझसे भी बड़ा राम-भक्त है! देवी अञ्जना के स्पर्श-मात्र से हनुमान की छाती फिर ज्यों-की-त्यों हो गई।

किसी समय दुष्टचित्त नाम का राजा था जिसकी राजधानी का नाम कल्पना-नगर था। उस राजा की सेना में प्रताप नाम का एक बहादुर रहता था। प्रताप एक दिन जङ्गल में शिकार खेलने के लिए गया और सरोवर के किनारे एक झाड़ी में छिप गया। उसने सोचा कि घाट पर पानी पीने के लिए कोई जङ्गली जानवर आएगा तो वह उसे मार डालेगा।

लेकिन बड़ी देर तक ताक में बैठे रहने पर भी कोई जानवर पानी पीने नहीं आया। आखिर जब सांझ हो गई तो सात हंस आसमान से उड़ते-उड़ते वहां उतरे। प्रताप मन-ही-मन उन्हें सराह रहा था कि उन हंसों ने अपने-अपने पङ्ख उतार कर किनारे रख दिए और सुन्दर देवियां बन गए। वे देवियां किलकती हुई सरोवर में उतरीं और जल-विहार करने लगीं।

प्रताप दबे पाँव झाड़ी से बाहर आया और उन पङ्खों में से एक जोड़ी बहुत सुन्दर पङ्ख लेकर फिर झाड़ी में छिप गया। देवियों का जल-विहार पूरा हुआ और वे किनारे पर आईं। फिर अपने-अपने पङ्ख लगा कर हंस रूप में वे आसमान में उड़ गईं। इस तरह छः ही देवियां उड़ीं! सातवीं देवी को अपने पङ्ख नहीं दिखाई दिए। इसलिए वह उड़ नहीं सकी और वहीं पङ्ख खोजती रह गई। उसको देख कर प्रताप मुग्ध हो गया। इतने में उस देवी ने कातर-स्वर से पुकार कर कहा—'मेरे पङ्ख किसी ने उठा लिए हैं! कृपा करके मुझे लौटा दें! अगर वे बाल-बच्चे वाले हों तो मुझे भी अपनी संतान मान लें। अगर वे मनचाही युवती हों तो मुझे अपनी सगी बहन मान लें। अगर वे कोई युवक हों तो मुझे अपनी पत्नी मान लें। मगर वे मेरे पङ्ख ज़रूर लौटा दें।'

दुर्गासिंह

उसकी पुकार सुनते ही प्रताप का हृदय पिघल गया। झट झाड़ी से निकल कर उस के पङ्ख उसके आगे रख दिए और बोला—'ये हैं तुम्हारे पङ्ख! अब हंस बन जाओ और आसमान में उड़ जाओ! माफ़ कर देना। मैंने तुम्हें व्यर्थ इतना कष्ट दिया!'

लेकिन उस देवी ने पङ्ख नहीं उठाए। वह बोली—'आप कौन हैं? क्या आदमी भी इतना सज्जन होता है! क्या वह इतना सुन्दर भी होता है!' उसे बड़ा अचरज हुआ। यह सुन कर प्रताप मुसकुरा उठा और बोला—'इतनी तारीफ़ करती हो तो मुझे अपना क्यों नहीं बना लेतीं?' देव-बाला ने झट अपने गले का रत्नहार उतारा और प्रताप के गले में डाल दिया। इस अद्भुत सौभाग्य को देख कर प्रताप फूला न समाया। वह अपनी सङ्गिनी को लेकर शहर लौट गया।

धीरे-धीरे प्रताप की पत्नी की अलौकिक सुन्दरता की खबर राजा दुष्टचित्त के कानों में पड़ी। वह एक दिन भेष बदल कर उस के घर गया और अपनी आँखों देख भी आया।

दूसरे दिन उसने प्रताप को बुला भेजा और बनावटी प्यार दिखलाते हुए बोला—'प्रताप! सात समुन्दर पार एक जङ्गल है। उस जङ्गल में एक पहाड़ है। उस पहाड़ पर एक किला है। उस किले में रहता है राजा चित्राङ्ग जिसका नौ अंगुल का तो शरीर है और नब्बे गज की चोटी। उस राजा के यहाँ 'अदृश्य दासी' नाम की एक परी रहती है। उसे किसी तरह पकड़ लाओगे तो मैं तुम्हें अपना सेनपति बना दूँगा!'

राजा की बात सुन कर प्रताप सोच में डूबा हुआ घर गया और सब बात जाकर पत्नी को सुना दी। तब देवी बोली—'इस में डरने की कोई बात नहीं! देखो, यह चाँदी की गेंद ले लो! इसे शहर के बाहर जाते ही लुढ़का देना। लुढ़कती-लुढ़कती

यह तुम्हें देव-लोक ले जाएगी और मेरे घर की राह बता देगी। तुम इसके पीछे-पीछे चले जाना! मेरे घर जाकर मेरा यह रूमहार सब को दिखा देना और मेरा कुशल-समाचार सुना देना। बस, वे लोग तुम्हें कोई-न-कोई उपाय ज़रूर बता देंगे।' यह कह कर उसने चाँदी की गेंद प्रताप को दी। प्रताप ने पत्नी के कथनानुसार काम किया और निर्विघ्न ससुराल पहुँच भी गया।

इसी बीच कल्पना-नगर के राजा दुष्टचित्त ने प्रताप की पत्नी देवबाला को बुलवाया और कहा—'तुम्हारा पति तो अब लौट कर आएगा नहीं! देखो, मैं राजा हूँ। तुम मुझसे ब्याह कर लो और रानी बन कर रहो!' उसकी बातें सुन कर देवबाला को गुस्सा आ गया। वह बोली—'क्या समझ लिया तूने मुझे? खबरदार!' उसकी बात सुन कर राजा को कुछ कहने का साहस न हुआ। उसने उसे समुन्दर के किनारे एक दुर्गम भवन में नज़रबन्द कर दिया।

इधर प्रताप जब देवलोक पहुँचा और देवबाला के घर वालों ने अपनी बेटी का रूमहार देखा तो उसका बड़ा आदर-सत्कार किया और सब समाचार पूछा। प्रताप ने अपनी सारी कहानी ससुराल वालों को सुना दी। तब प्रताप की सास ने चौरासी जीवों को बुला कर पूछा कि 'चित्राङ्ग का राज कहाँ है?' कोई कुछ नहीं बोला। मगर एक लँगड़े मेंढक ने कहा—'उसका हाल मुझे मालूम तो है, लेकिन वह जगह यहाँ से बहुत दूर है।' सास ने उस लँगड़े मेंढक को साथ करके प्रताप को विदा कर दिया।

प्रताप उस लँगड़े मेंढक के पीछे-पीछे चला। दोनों ने सात समुन्दर पार किए। फिर वे जङ्गल में घुसे। आखिर पहाड़ पर चढ़ कर दोनों चित्राङ्ग के किले के पास पहुँच गए। अब मेंढक प्रताप से बोला—

'भैया ! वही किला है। मैं यहाँ बैठ कर तुम्हारी राह देखूँगा। तुम अन्दर जाओ और अपना काम करके सकुशल लौट आओ !'

प्रताप मेंढक से विदा लेकर किले में घुसा। किला क्या था, एक काल-कोठरी ही थी। हाथ को हाथ नहीं सूझता था। प्रताप बड़ी मुश्किल से टटोलता-टटोलता आगे बढ़ा। कुछ दूर जाने पर वह बहुत थक गया और एक जगह बैठ गया।

बैठा ही था कि कहीं से दरवाज़ा खोलने की आवाज़ आई। 'अदृश्य दासी ! अदृश्य दासी !' किसी ने बादल की तरह गड़गड़ा कर पुकारा। सारा किला, तब तक जो अन्धेरे के सागर में डूबा हुआ था, अचानक हज़ारों दीपों के प्रकाश से जगमगा उठा। प्रताप फुर्ती से उठा और एक खम्भे की आड़ में छिप कर देखने लगा कि अब क्या होता है?

नौ अंगुल के शरीर और नब्बे गज की चोटी वाला एक आदमी उस ओर आ रहा था। प्रताप अचरज करने लगा कि वह इतने गम्भीर स्वर में कैसे बोल सका ! इतने में वह विचित्र व्यक्ति फिर चिल्लाने लगा—'अदृश्य दासी ! काहे की देरी हो रही है ! मैं तीनों लोक में सञ्चार करके थका-माँदा लौटा हूँ। क्या तू इतना भी नहीं जानती कि जल्दी से पैर पखारने के लिए पानी ला देना चाहिए !' इतने में प्रताप ने देखा कि एक सोने का कलश हवा में उड़ा चला आ रहा है। पैरों की आहट हो रही है। लेकिन कोई नहीं दिखाई देता। चित्राङ्ग ने पैर पखार लिए और फिर चिल्लाया—'जल्दी से भोजन परोस दो अदृश्य दासी ! मुझे अभी एक जगह जाना है !' झट आसन बिछ गया। पत्तल पर छप्पन प्रकार के व्यञ्जन आ गए और यह सब पल में हो गया। लेकिन उस दासी को प्रताप नहीं देख सका। चित्राङ्ग खा-पीकर डकारते हुए

कुल्ला करके, चोटी सँवार कर चला गया। उसके जाते ही सभी दीप बुझ गए।

तब प्रताप ने मधुर-स्वर में कहा—'ओ अदृश्य दासी! कृपा करके दीप जलाओ! मुझे अन्धेरे में डर लगता है।' बस, जगमग करके दीप जल उठे। 'मुझे बड़ी भूख लग रही है। क्या खाना नहीं परोस दोगी?' प्रताप बोला। बस, पत्तल आ गया और खाना परोस दिया गया। तब प्रताप ने कहा—'आओ! हे अदृश्य दासी! तुम भी मेरे साथ खाने बैठ जाओ! तुमने अपने मालिक को खिला दिया; लेकिन खुद तो नहीं खाया।' इस पर एक मीठी आवाज़ आई—'भैया! तुम कौन हो? बहुत भले आदमी जान पड़ते हो! कई सौ बरसों से मैं इस चिराग़ की सेवा कर रही हूँ। लेकिन उसने इस तरह मीठे स्वर में कभी खाने को नहीं कहा!'

इतना कह कर वह अदृश्य दासी खाने बैठ गई। तब प्रताप बोला—'हे अदृश्य दासी! तुम मेरे साथ क्यों नहीं चल देती?'

'ज़रूर चली आऊँगी। लेकिन एक बात है; मैं अपने आप कोई काम नहीं कर सकती। मुझे हरेक काम के लिए किसी का हुक्म लेना होता है। तुम हुक्म दो कि मेरे साथ चले आओ! मैं तुरन्त तुम्हारे साथ चली आऊँगी।' उस आवाज़ ने कहा। बस, प्रताप को उसका भेद मालूम हो गया। उस ने मीठी बातों से अदृश्य दासी का मन मोह लिया था। 'अदृश्य दासी! तुम मेरे साथ चली आओ!' प्रताप ने हुक्म दिया। बस, उसके पीछे-पीछे पैरों की आहट सुनाई पड़ने लगी।

किले के बाहर आते ही लङ्गड़ा मित्र, मेंढक बैठा दिखाई दिया। प्रताप ने कहा—'अदृश्य दासी! यह मेरा मित्र मेंढक है। तुम इसकी टाँग अच्छी कर दो!' बस,

तुरन्त मेंढक की टाँग चङ्गी हो गई। वह खुशी से उछलने-कूदने लगा। 'हे अदृश्य दासी! अब मुझे तुरन्त ससुराल पहुँचा दो!' प्रताप बोला। पलक मारते वे दोनों देवलोक पहुँच गए। प्रताप की सास ने आनन्द से कहा—'बेटा! तुम्हारी सज्जनता ही इन सब सफलताओं का कारण है। इसी सज्जनता ने मेरी बेटीका मन मोह लिया। इसी से यह परी भी तुम्हारे पीछे पीछे चली आई। अब जल्दी चले जाओ! मालूम होता है कि मेरी बेटी पर कोई आफत आई है। तुरन्त जाकर उसे बचाओ!'

बस, प्रताप ने तुरन्त हुक्म दिया—'हे अदृश्य दासी! अब मुझे कल्पना-नगर पहुँचा दो!' क्षण भर में कल्पना-नगर पहुँच गया। सीधे राजा के पास जाकर वह बोला—'रे दुष्ट! तूने मेरे साथ विश्वासघात किया है। माफी माँग! नहीं तो!' यह सुन कर राजा ने सिपाहियों को हुक्म दिया—'देखते क्या हो! पकड़ लो इस बदमाश को।' बस, बहुत से सिपाही प्रताप को घेरने लगे। उसने हुक्म दिया—'हे अदृश्य दासी! इन मूर्खों के होश ठिकाने लगा दो!' बस, अदृश्य दासी ने उन सब सिपाहियों को तिनकों की तरह उड़ाया और नगर से बाहर दूर ले जाकर फेंक आई। तब राजा तलवार निकाल कर प्रताप पर टूट पड़ा। प्रताप ने कहा—'अदृश्य दासी! इस दुष्ट को उसकी करनी का मज़ा चखा दो!' देखते ही देखते राजा दुष्टचित्त आसमान में उड़ चला। यों बहुत दूर तक ऊपर ले जाकर अदृश्य दासी ने उसे छोड़ दिया। वह धड़ाम से नीचे गिरा और ठण्डा हो गया।

फिर तो प्रताप कल्पना-नगर का राजा बना। देवबाला उसकी रानी हुई। अदृश्य दासी के रहते उन्हें किस बात की कमी होती?

किसी समय चूड़ागाँव में मस्तान नाम का एक जुलाहा रहता था। गाँव बहुत छोटा था; इसलिए पेट भरना उसके लिए मुश्किल हो गया। तब मस्तान सोच में पड़ गया—'या खुदा! अब मैं क्या करूँ!' आखिर उसने तै किया कि किसी दूसरे गाँव जाकर रोज़ी कमाए। वह अकेला था और उसकी सारी सम्पत्ति थी एक धुनकी। इसलिए एक दिन वह सबेरे उठा, धुनकी कन्धे पर रक्खी और राजगाँव नाम के एक दूर के गाँव की तरफ़ चल पड़ा।

राजगाँव और चूड़ागाँव के बीच दस कोस का फासला था। राह में एक बड़ा जङ्गल भी था। जङ्गल बहुत घना था और जाने के लिए सिर्फ़ एक पगडण्डी थी। मस्तान ने सोचा कि राह में खाने के लिए कुछ-न-कुछ लेते चलना चाहिए। इसलिए एक आने का सत्तू खरीद लिया और पोटली बाँध कर लेते चला। दोपहर होते-होते उसके पेट में चूहे कूदने लगे। उन चूहों को चुप करने के लिए उसने सत्तू अन्दर फेंक दिया। फिर जो जगह खाली बच गई उसे उसने नाले के पानी से भर दिया। इस तरह आत्माराम को तृप्त करके धुनकी की ताँत को टङ्कारते हुए वह मज़े-मज़े में कदम बढ़ाने लगा।

चलते-चलते मस्तान, जिसके पैरों में पर लग रहे थे, एक जगह अचानक रुक गया। बात यह थी कि एक बाघ जो झाड़ी में दुबका बैठा था, उसे देख कर निकल आया और राह रोक कर खड़ा हो गया। उसे देखते ही मस्तान की सिट्टी-पिट्टी गुम हो गई। लेकिन हाथ धुनकी को टङ्कारते ही रहे।

बाघ भी मस्तान को देखता और गुर्राता खड़ा रहा। न बाघ ने गुर्राना छोड़ा, और न मस्तान के हाथों ने ताँत को टङ्कारना ही।

रामदयाल दुबे

इतने में एक सियार वहाँ आया। उसने यह दृश्य देखा तो बाघ के पास जाकर बोला—'बाघ मामू! देखते क्या हो! झपट कर उस आदमी को चट क्यों नहीं कर जाते!'

इस पर बाघ ने कहा—'देखते नहीं! उसके हाथ में एक अजीब बन्दूक है। उस को देख कर तो मुझसे न भागते ही बनता है, न खड़ा ही रहा जाता है!' उसने अपने मन का डर सियार से कह दिया।

सियार को मालूम था कि जुलाहे के हाथ में क्या चीज़ है। बाघ की बेवकूफ़ी पर वह मन-ही-मन खूब हँसा। फिर बोला—'अच्छा! मामू! मेरे रहते तुम्हें डर किस बात का! मैं जाकर उसे बातों में फँसाता हूँ। तुम धीरे से खिसक जाना!'

लेकिन बाघ को हिम्मत न हुई। उसने कहा—'लेकिन मुझे यह कैसे मालूम हो कि वह मेरी ओर नहीं देख रहा है!' तब सियार बोला—'यह तो कोई बड़ी बात नहीं है! एक बार जहाँ मैं 'हुआँ' करूँ कि तुम भाग जाना!' यों बाघ को धीरज बँधा कर सियार जुलाहे के पास गया और बोला—'क्यों भैया! यों खड़े क्या देख रहे हो! कुछ कहो तो सही!'

मस्तान झुंझला कर बोला—'वाह! खूब पूछ रहे हो! इतना भी नहीं समझ सकते! देखते नहीं, सामने बाघ खड़ा है!'

उसकी बातें सुन कर सियार बोला—'वाह! यही है तुम्हारी हिम्मत! अच्छा, कहो तो मैं चुटकी बजाते उसे यहाँ से भगा दूँ! एक बार जहाँ 'हुआँ' करूँ कि फिर देखना, बाघ सिर पर पैर रख कर भाग खड़ा होता है कि नहीं!' सियार ऐसे बोला जैसे वही बाघों का राजा हो। जुलाहे को उसकी बातों पर विश्वास न हुआ। उसने सोचा कि यह यों ही डींग हाँक रहा है। फिर भी सियार का रङ्ग खोलने के ख्याल से वह बोला—

'अच्छा भाई ! अगर तुम सचमुच बाघ को भगा दोगे तो मैं तुम्हें मुँह-माँगा ईनाम दूँगा।' इतना सुनते ही सियार ने एक बार ज़ोर से 'हुआँ' किया। आश्चर्य! बाघ दुम दबा कर भाग खड़ा हुआ। जुलाहे ने अपने माथे का पसीना पोंछा और सोचा—'अल्लाह का शुक्र ! मौत के मुँह से बचा !'

सियार ने देखा कि जुलाहा बेफ़िक्र हो गया तो बोला—'अच्छा, दे दो अब मेरा ईनाम! जुलाहे ने सुख की साँस लेकर कहा—'अच्छा, बोलो! क्या चाहते हो?' 'मुझे और तो कुछ नहीं, सिर्फ़ तुम्हारा कलेजा चाहिए!' सियार निधड़क माँग बैठा। जुलाहा आँखें फाड़-फाड़ कर देखने लगा। आख़िर अपने को सम्हाल कर बोला—'अच्छा! इतना ही! मैं तो सोच रहा था, जाने तुम क्या-न-क्या माँग बैठो! डर था कि कहीं वह मेरे बूते के बाहर की बात न हो! अच्छा, तो सुनो! तुमने मेरी जान बचाई है। इस ज़िन्दगी में मैं तुम्हारा एहसान कभी नहीं भूल सकता। लेकिन तुम्हें ज़रा सब्र करना पड़ेगा। थोड़ी ही देर पहले मैंने जो वादे किए थे उनको ज़रा पूरा हो जाने दो! अभी-अभी एक भेड़िए ने मुझसे रोटी का टुकड़ा, जो मेरे पेट में था, माँगा। मैंने कहा—'अच्छा भाई! ले लो!' बस, वह मेरे पेट में घुस गया। उसका पीछा करते दो शिकारी कुत्ते भी आए और वे भी मेरे पेट के अन्दर चले गए। पहले उनको तो बाहर निकाल दूँ। फिर तुम मज़े से मेरा कलेजा ले लेना!' जुलाहे ने व्याख्यान झाड़ते वक्त मन की हैरानी झलकने तक न दी।

शिकारी कुत्तों का नाम सुनते ही सियार उछला और सिर पर पाँव रख कर नौ-दो-ग्यारह हो गया। सच है, किसी भी हालत में धीरज खोना नहीं चाहिए और अक़्ल से काम लेना चाहिए।

खुरगपूर में धनीराम नाम का एक अमीर आदमी रहता था। धनीराम अमीर तो ज़रूर था, मगर कभी दान-पुण्य करने का नाम नहीं लेता था। इतना ही नहीं, जो कोई उससे कुछ माँगने जाता तो उनकी खिल्ली उड़ा कर भगा देता था। जिनको उसकी यह आदत मालूम थी, वे कभी भूल कर भी उस ओर नहीं जाते थे और जो यह नहीं जानते थे, वे व्यर्थ परेशानी में पड़ जाते थे।

एक बार की बात है, उस शहर में बेचनराम नाम का एक मुसाफिर आया। सड़क पर खड़ा होकर वह सोचने लगा कि किन के घर जाने से उसे आसानी से खाना मिल जाएगा! सामने से जाते हुए एक आदमी को देख कर उसने पूछा—'भैया! मैं परदेशी हूँ। क्या तुम मुझे कोई ऐसा घर बता सकोगे, जहाँ मुझे आज खाना मिल जाए!'

तब उस आदमी ने कहा—'यह तो मैं नहीं बता सकता। लेकिन एक बात बता देता हूँ। देखो, दूर पर वह जो घर दिखाई देता है, वहाँ कभी मत जाना! वहाँ किसी को कुछ नहीं मिलता है।' यह कह कर उसने धनीराम का ऊँचा घर दिखा दिया।

यह सुन कर बेचनराम ने पूछा—'क्यों भैया! क्या उस घर का मालिक इतना कंजूस है कि वह भूख से बेहाल आदमी को पेट भर खाना भी नहीं देता!'

तब उस आदमी ने कहा—'इतना ही नहीं, भूखे आदमी के मुँह का कौर छीन न ले तो गनीमत समझो!'

लेकिन बेचनराम बड़ा उद्दण्ड आदमी था। उसने उस आदमी की बातें सुनीं तो सोचने लगा—'क्यों न इस कंजूस की खबर लूँ!' बस, वह सीधे धनीराम के ही घर जा पहुँचा। किवाड़ खटखटाते ही धनीराम

चन्द्रनाथ अवस्थी

ने आकर दरवाज़ा खोल दिया। 'क्या चाहते हो?' उसने पूछा। 'भूखा हूँ, कुछ भोजन मिल जाए, इस आशा से आया हूँ। मैं दूर का मुसाफिर हूँ। थका-माँदा हूँ। आज यहीं खा-पीकर शाम होते ही चल जाऊँगा। पूछने पर मालूम हुआ कि इस गाँव में सबसे बड़े दानी आप ही हैं। इसलिए सीधे आपके यहाँ चला आया।' बेचनराम ने कहा।

इस पर धनीराम ने हँस कर कहा—'आप ठीक समय पर आ गए भाई! मैं भोजन पर बैठना ही चाहता था कि आप आ गए। शास्त्रों में कहा भी तो है—'अभ्यागतः स्वयं विष्णुः।' घर आए मेहमान को दावत देनी चाहिए। रूखा-सूखा तो उन्हें खिलाया नहीं जा सकता। इसलिए मेहरबानी करके आप थोड़ी देर ठहर जाइए। मैं आपके लिए तरह-तरह की चीजें बनवाता हूँ।'

धनीराम की बातों में जो भेद छिपा हुआ था, बेचनराम जान गया। लेकिन बिल्कुल अनजान की तरह बोला—'भैया! आप जितनी देर कहें, बैठा रहूँगा। दिन भी तो कुछ ज्यादा नहीं चढ़ा है!' यह कह कर वह बैठक-खाने में आकर बैठ गया। उसको

यों आसन जमाते देख कर धनीराम का मुँह गुस्से से तमतमा उठा। उसने मन में कहा—'बैठो, थोड़ी देर में ही सारी कसर निकाल लूँगा। अभी जल्दी क्या है!' यह सोच कर वह चुप रह गया। इधर बेचनराम आँखें मूँद कर सोचने लगा कि 'देखें, अब क्या गुल खिलता है!'

थोड़ी देर बाद धनीराम आया और कहने लगा—'अब उठिए! हे विष्णु-रूप, अतिथि-देव! दावत तैयार है! अरे! कोई है वहाँ? लोटे में पानी तो ले आना!' उसने नौकर को पुकारा। बेचनराम उठ खड़ा हुआ और नौकर के पानी लाने की राह

देखने लगा। लेकिन आया कुछ भी नहीं! न नौकर, न पानी! फिर भी धनीराम नौकर के हाथ से पानी लेने और हाथ-पैर धोने का अभिनय करने लगा।

बेचनराम ने सोचा—'अच्छा, तमाशा शुरू हो गया है।' उसने हाथ-पैर धोने का वही अभिनय किया और भोजन के लिए तैयार हो गया। धनीराम ने नहीं सोचा था कि उसका मेहमान भी इस अभिनय में उस्ताद निकलेगा। उसने सोचा था कि वह बेचारा नौकर की राह देखता खड़ा रहेगा।

'यह तो भारी चन्ट जान पड़ता है! अच्छा, देखें, आगे क्या होता है!' उसने सोचा और मेहमान से कहा—'अब रसोई-घर में चलें।' यह कह कर वह उसे रसोई-घर में ले गया। वहाँ दो पीढ़े लगे हुए थे और उन दोनों के सामने चाँदी की दो थालियाँ रखी हुई थीं। उन थालियों के चारों ओर बहुत से खाली परात और कटोरियाँ वगैरह रखी हुई थीं। कहीं कोई खाने की चीज़ दिखाई नहीं देती थी।

धनीराम एक पीढ़े पर बैठ गया और अपने मेहमान से दूसरे पीढ़े पर बैठ जाने को कहा। लेकिन न कोई रसोइया आया और न खाने की कोई चीज़ ही आई। फिर भी धनीराम ने हाथ से दाल-भात मिलाने का अभिनय किया और बोला—'बस! बस! उन्हें घी डालो!' बेचनराम तो उससे भी ज्यादा घाघ था। वह बोला—'नहीं, नहीं, भैया! बस! बस!' वह खाली थाली में दाल-भात मिलाने का अभिनय करने लगा।

धनीराम ने सोचा—'वाह! यह तो मुझसे भी गुरु-घण्टाल निकला!' फिर बोला—'अच्छा! अब मिठाइयाँ ले आओ! उस कटोरे में रसगुल्ले हैं। इधर दे दो! अन्दर जाओ! कुछ और ले आओ! हाँ, अतिथि-देव! शरमाना नहीं! इतमीनान से

खाते जाना!' उसने बेचनराम से कहा। तब बेचनराम बोला—'वाह! आपका रसोइया तो पाक-शास्त्र में पण्डित मालूम होता है। राजा नल और भीम भी इसकी बराबरी नहीं कर सकते!' यों बारंबार बड़ाई करता और ओंठ चाटता वह उन अगोचर और अनूठे व्यञ्जनों का स्वाद लेने लगा। 'नहीं, नहीं, भैया! अब और न डालना! मेरा पेट भर गया है। अब मैं बिलकुल नहीं खा सकता। एकदम जी भर गया है!' बेचनराम ने अदृश्य रसोइए को देख कर कहा।

यह सुन कर धनीराम बोला—'भैया! अगर मीठा खाते-खाते जी भर गया हो तो कुछ नमकीन चखो! कुछ कचौड़ियाँ उड़ाओ! देखो, कितनी मुलायम हैं! मुँह में जाते ही गल जाती हैं। हाँ, भई! दही-बड़े परोसना तो भूल ही गए तुम! अतिथि-देव! थोड़ा सा दही और ले लो न!'

बेचनराम ने एक रीती कटोरी की ओर देख कर कहा—'इस कटोरी में कौन सी चीज़ है, यह तो मुझे मालूम ही नहीं हुआ।' जैसे सचमुच उस कटोरी में कोई चीज़ हो!

तब धनीराम बोला—'अच्छा, वह! वह तो मलबार की चीज़ है। उसे 'अवियल' कहते हैं। थोड़ा सा चखो तो सही! देखो, कैसी स्वादिष्ट है!'

अब बेचन-राम को अच्छी तरह पता चल गया कि धनीराम आखिर तक ऐसा ही अभिनय करके, उसे भूखा ही भगा देना चाहता है। वह सोचने लगा कि 'इस दुष्ट को कैसे मज़ा चखाया जाए!' आखिर उसे एक उपाय सूझ गया।

उसने सामने का एक लोटा उठा लिया और उसमें से कुछ पीने का अभिनय करते हुए बोला—'वाह! आपको यह कैसे पता चल गया कि मुझे भाँग बहुत पसन्द है! वाह! वाह! ठण्डाई कैसी छनी है! क्या

मिठास है ! क्या कहा जाए, यह तो अमृत है। नहीं, नहीं ! अमृत इसके सामने क्या चीज़ है ! यही देवताओं का सोम-रस है !' यों उसने लोटा खाली करने का अभिनय किया और उसे नीचे रख कर, नशे में चूर आदमी की तरह बड़बड़ाने लगा। यह देख कर धनीराम भौंचक रह गया। 'यह क्या !' कह कर वह उठने लगा। लेकिन बेचनराम ने मतवाले की तरह 'यह क्या ! कुछ भी तो नहीं !' कहते हुए, कस कर उसकी चोटी पकड़ ली और झुका कर धमाधम चार-पाँच घूँसे जमा दिए।

धनीराम 'हाय-तोबा !' मचाने लगा। उसका चीखना-चिल्लाना सुन कर अड़ोसी-पड़ोसी जमा हो गए। धनीराम ने उनसे शिकायत की—'देखो ! भाइयो ! यह दुष्ट मेहमान बन कर आया और अब मुझी को पीट रहा है !' तब सब लोग बेचनराम को भला-बुरा कहने लगे—'क्यों भाई ! जिस पत्तल में खाते हो उसी में छेद करते हो !' और उसे खूब फटकारने लगे। तब यह सुन कर बेचनराम पछताते हुए बोला—'भाइयो ! माफ करो ! इन्होंने मुझे भाँग पिला दी। नशे में मुझसे कुछ चूक हो गई है।' तब धनीराम बोला—'नहीं, नहीं, बिलकुल झूठ ! भाँग-वाँग कुछ नहीं। सब कुछ झूठ है।' 'अगर भाँग की बात झूठ है, तो दावत की बात भी झूठ है।' बेचनराम बोला। यह कह कर उसने लोगों से सारी कहानी कह दी। बस, धनीराम की पोल खुल गई और लोग उस कंजूस की निन्दा करके अपने-अपने घर चले गए।

धनीराम की आँखें खुल गईं। अपनी करनी पर बहुत पछताया और बेचनराम के पैरों पड़ गया। बेचनराम ने कहा—'अब किसी भूखे-प्यासे के साथ ऐसी बदतमीज़ी न करना।' धनीराम सचमुच गिड़गिड़ाने और कसम खाने लगा कि अब से वह मेहमान का कभी अपमान नहीं करेगा।

गोप पढ़ने से जी चुराता था। लेकिन उसकी बहन सुशीला पढ़ने-लिखने में बहुत रस लेती थी। गोप हमेशा यही सोचा करता था कि कैसे स्कूल जाने से उसका पिण्ड छूट जाए! लेकिन सुशीला स्कूल जाने में एक घड़ी भी देर नहीं करती। वह एक दिन भी स्कूल से अनुपस्थित रहना नहीं चाहती थी।

उनके बैठक-खाने में दीवार पर एक बड़ी घड़ी थी। वह हर पन्द्रह मिनट पर आवाज़ करती थी।

एक दिन गोप ने बहन को उस घड़ी के सामने ले जाकर कहा—'बहन! ज़रा उस घड़ी की ओर तो देखो।'

'नौ बज कर चालीस मिनट हो गए हैं। उठो, जल्दी कपड़े पहन लो! स्कूल जाना है।' उसकी बहन उस घड़ी की ओर देख कर बोली।

इस पर गोप बोला—'बहन! घड़ी नहीं, यह तो एक मुसीबत है! यह हमेशा हमें स्कूल जाने की बात याद दिलाती है। यह सिर्फ़ हमारी ही नहीं, सभी नौकरी करने वालों, अध्यापकों और विद्यार्थियों की दुश्मन है। इसे जो कुछ सज़ा दी जाए, थोड़ी है।' वह मुट्ठी बांध कर बोला।

'भैया! यह तुम क्या कहते हो? यह घड़ी हमारी कितनी भलाई करती है! इस के बिना हमारा काम कैसे चलेगा! इसे देख कर ही हम समय पर स्कूल जाते हैं। समय पर स्कूल जाने से हमको मास्टर की डांट-डपट सुनने की नौबत नहीं आती।' सुशीला ने जवाब दिया। उसके यों कहते ही नौ बज कर पैंतालीस मिनट हो गए। घड़ी का गजर खड़का। उनकी मां अन्दर से चिल्लाई—'अरे! तुम दोनों कहां हो? स्कूल का समय हो गया।'

सुनीता देवी

गोप दाँत पीस कर कहने लगा—'यह घड़ी नहीं, भूतनी है, राक्षसी है! देखो तो कैसे चिल्लाती है!' फिर भी लाचार था। कपड़े पहन कर जल्दी-जल्दी स्कूल चला। उसके पीछे-पीछे सुशीला भी उछलती चली।

गोप स्कूल तो जा रहा था, लेकिन उस का ध्यान उस घड़ी पर लगा हुआ था जो अब उसकी बैरिन बन गई थी। वह बहन से बोला—'बहन! तू घड़ी की बहुत बड़ाई कर रही है। तू अभी नादान है। तू नहीं जानती: वह घड़ी नहीं, एक भूतनी है। उस का मुँह कभी बन्द नहीं होता। वह हमेशा कुछ-न-कुछ बकती ही रहती है। वह लड़कों को स्कूल दौड़ाती है। नौकरी करने वालों को चैन से खाने भी नहीं देती। वह गाँव जाने वालों की गाड़ी छुड़ा देती है। वह बड़ी दुष्ट है!' यह कह कर वह दाँत पीसने लगा। किसी तरह दोनों भाई-बहन स्कूल पहुँचे। चार बजते ही छुट्टी मिल गई। लड़के सभी अपने-अपने घरों के सामने खेल के मैदान में खेलने लगे। खेल में डूब कर वे सारी दुनिया को भूल गए। ऐसे समय 'टन-टन' करके घड़ी की आवाज़ आई। बस, गोप की माँ पुकार उठी—'बेटा! समय हो गया। खेलना छोड़ो और खाने आओ!'

गोप एक दम जल-भुन उठा। उसे बहुत गुस्सा आया। खून खौलने लगा। उसने एक रोड़ा उठा लिया और दाँत पीसता बैठक-खाने में गया। फिर उसने रोड़ा ज़ोर से घड़ी पर दे मारा। घड़ी का शीसा चूर-चूर हो गया। बस, गोप को और कुछ सुनाई नहीं दिया। घड़ी अब अक्लमन्द लड़के की तरह चुपचाप ध्यान में मग्न हो गई थी।

गोप ने अकड़ते हुए बहन से कहा—'बहन! मैंने इस बला से पिण्ड छुड़ा लिया। अब कोई फिक्र नहीं। अब हम जितनी देर चाहें खेलते रह सकते हैं। कोई रोकने वाला नहीं।' लेकिन वह रोती हुई अन्दर भाग गई।
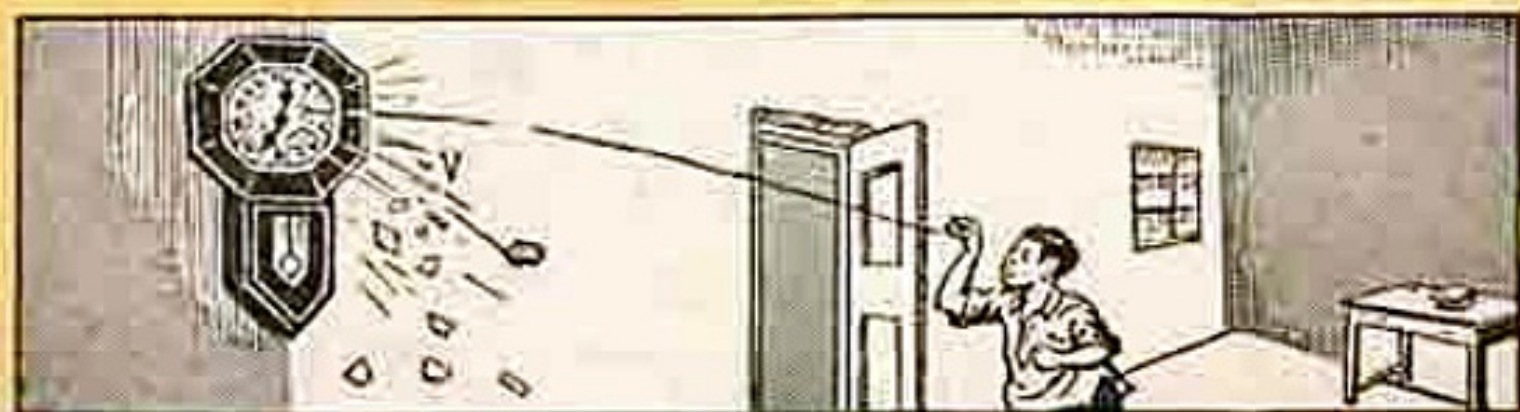
रंगीन चित्र-कथा, पाँचवाँ चित्र

हाँ तो, एक दिन की बात है। रात का वक्त था। बादशाह अपने सोने के कमरे में मखमली गद्दों पर लेटे हुए थे। नकली याने कल-पुर्ज़ों वाली बुल्बुल गा रही थी। बादशाह आँखें मूँदे चुपचाप उसका गाना सुन रहे थे। अचानक 'अर्र-र्र-र्र-र्र' की सी आवाज़ हुई। बुल्बुल के अन्दर कोई पुर्जा टूट गया और गाना बन्द हो गया। बादशाह को बड़ी निराशा हुई। तुरन्त उन्होंने अपने राज के अच्छे से अच्छे कारीगरों को बुलवा कर उस बुल्बुल की मरम्मत करने को कहा। कारीगरों के मुखिया ने उस पंछी की जाँच-पड़ताल करके कहा—'जहाँ-पनाह! हम इसे ठीक तो कर देंगे। लेकिन यह पहले की तरह हर रोज नहीं गा सकेगी। महीने में एकाध बार या मुख्य अवसरों पर काम देगी। आगे हुज़ूर की जो मर्ज़ी!' बादशाह ने उसे ठीक कर लाने का हुक्म दिया। उनके हुक्म के मुताबिक उसे ठीक भी कर लाया गया। लेकिन अब वह पहले की तरह हर रोज नहीं गाती थी। इस बात को छिपा कर रखा गया। क्योंकि प्रगट हो जाने पर सल्तनत की शोहरत को धक्का पहुँचने का डर था। इसीलिए दरबारी गवैए ने भरी सभा में व्याख्यान झाड़ते हुए घोषणा भी की—'कल-पुरजों की हमारी बुल-बुल हमेशा की तरह गा रही है!' यों पाँच साल बीत गए। एक बार बादशाह बहुत बीमार हो गया। जान बचने की कोई उम्मीद न रही। वैद्यों और हकीमों ने जवाब दे दिया। इसलिए लोगों ने उसकी जगह नया बादशाह चुना। सब लोग उस धूम-धाम में मशगूल थे। वे भूल गए थे कि पुराना बादशाह अभी ज़िंदा है। वह बेचारा अपने कमरे में अकेला पड़ा था। उसे कोई देखने वाला तक न था। दरबारी सभी नए बादशाह को बन्दगी बजाने गए थे। बादशाह दर्द से कराह रहा था। दूर से नए बाद-शाह का जय-घोष स्पष्ट सुनाई दे रहा था। सामने सोने की चौकी पर कल-पुरजों की बुल्बुल खड़ी थी। बादशाह ने कहा—'ऐ बुल्बुल! गाओ!' लेकिन बुल्बुल चुप रही। बादशाह ने कहा—'प्यारी बुल्बुल! मैं आखिरी बार तेरा गाना सुनना चाहता हूँ। गाओ!' लेकिन बुल्बुल ने मुँह न खोला। उसमें चाभी देने वाला कोई न था।

भानुमती

जादू की लकड़ी

अठारह अंगुल की लम्बाई और आधे अंगुल की गोलाई वाली एक लकड़ी ले लो। शान से उसे लाकर दर्शकों को दिखाओ। वास्तव में तो ऐसी लकड़ी घर से लाने की कोई जरूरत नहीं है। मामूली पेन्सिल, कलम या लकीर खींचने की लकड़ी से भी काम चल सकता है।

लेकिन दर्शकों पर रोब जमाने और उन पर अपनी धाक बैठाने के लिए घर से ऐसी कोई लकड़ी ले आना और उसे 'जादू की लकड़ी' कह कर उन को दिखाना अच्छा है। इसी तरह उनको तमाशा देखने के लिए तैयार करने के बाद अपने दोनों हाथों की उँगलियाँ गूँथ कर, (बगल का चित्र देखो!) जुड़े हुए हाथ दर्शकों को दिखाने चाहिए।
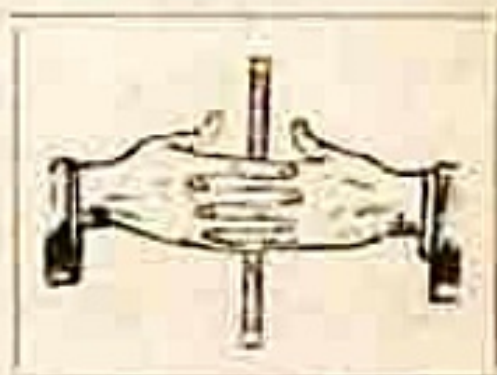
बाजीगर की सभी उँगलियाँ ऊपर दीखती होंगी। फिर भी उनके उस ओर जादू की लकड़ी बिना किसी अवलम्ब के खड़ी रह जाएगी। यही अजीब बात है! इसका रहस्य जान लेने पर हँसी आने लगेगी! इतनी आसान बात है यह! तुम सोचोगे—'वाह! हम कैसे ठगे गए! अच्छा छकाया हमें!' यह तमाशा करने में इतना आसान है! मगर इसका

की पिटारी

भेद दर्शक-गण उतनी आसानी से नहीं जान सकते। क्योंकि अनुभव से पता चलता है कि बाजीगरी के बड़े से बड़े तमाशे करने के लिए भी आसान से आसान रास्ते हैं! बाजीगर लोग इसी तरह दर्शकों को हैरान करते हैं। तमाशा देखने में जितना अजीब होता है उसका भेद वास्तव में उतना ही आसान होता है। बगल के पृष्ठ का चित्र देखने से तो ऐसा प्रतीत होता है कि यह बिलकुल असम्भव विषय है! लकड़ी बिना किसी अवलम्ब के कैसी खड़ी रह गई!
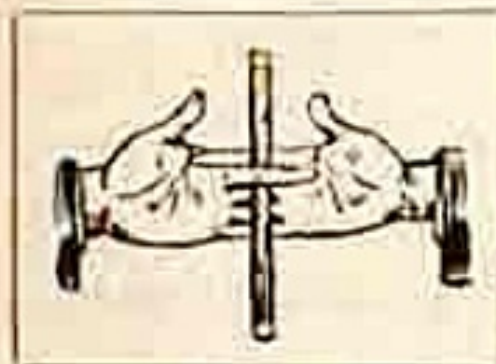
लेकिन बाजीगर की बड़ाई इसी बात में है कि वह असंभव से असंभव विषय को भी संभव करके दिखा दे। ऊपर का चित्र देखोगे तो जरूर हँसी आ जाएगी। क्योंकि साफ पता चलता है कि बाजीगर ने अपनी एक उँगली से जादू की लकड़ी को पकड़ रखा है! सोचो तो यह कितना आसान तमाशा है!

जो इस सम्बन्ध में प्रोफेसर साहब से पत्र-व्यवहार करना चाहें वे उनको 'चन्दामामा' का उल्लेख करते हुए अंग्रेज़ी में लिखें।

प्रोफेसर पी. सी. सरकार, मेजीशियन, १२/३ ए, अमीर लेन,

बालीगंज : कलकत्ता-१९

मैं कौन हूँ ?

*

मैं यूनान का एक प्रसिद्ध दार्शनिक हूँ:
चार अक्षरों का मेरा नाम है।
मेरा पहला अक्षर काट दोगे
तो अर्थ होगा — 'धनुष'।
मेरे पहले दोनों अक्षर काट दोगे
तो अर्थ होगा — 'आदर'।
मेरे अन्त के दोनों अक्षर काट दोगे
तो अर्थ होगा — 'छिप'।
मेरा चौथा अक्षर मात्र काट दोगे
तो अर्थ होगा — 'कौर'।
मेरे आदि और अन्त के अक्षर काट
दोगे तो अर्थ होगा — 'आर्जन कर'।
मेरे पहले और तीसरे अक्षर काट दोगे
तो अर्थ होगा — 'दाना'।
क्या तुम बता सकते
हो कि मैं कौन हूँ !

अगर न बता सको तो जवाब
के लिए ५२-वाँ पृष्ठ देखो !

बताओ तो ?

*

१. संसार की सबसे लम्बी दीवार कहाँ है !
(क) भारत (ख) चीन (ग) रूस

२. दुनियाँ का सबसे बड़ा राज-महल कहाँ है !
(क) रोम (ख) मास्को (ग) लन्दन

३. भारत के किस प्रांत में जङ्गल ज्यादा हैं !
(क) बंगाल (ख) मध्य-प्रदेश (ग) असाम

४. 'प्रिय-प्रवास' किसने लिखा !
(क) मैथिलीशरण (ख) प्रसाद (ग) हरिऔध

५. टाइपराइटर का आविष्कार किसने किया !
(क) फ्लाके (ख) शोल्स (ग) रेवो

६. दूरबीन का आविष्कार किसने किया !
(क) गेलीलियो (ख) एडीसन (ग) वाट

अगर न बता सको तो जवाब
के लिए ५२-वाँ पृष्ठ देखो !

चन्दामामा पहेली

बाएँ से दाएँ :

1. सुख
4. बादल
7. हिलना
8. जहर
9. राग
10. निर्दय
11. एक देवता
13. निर्लज्ज
15. धनी
17. भाभी
18. नाग
19. दंगल
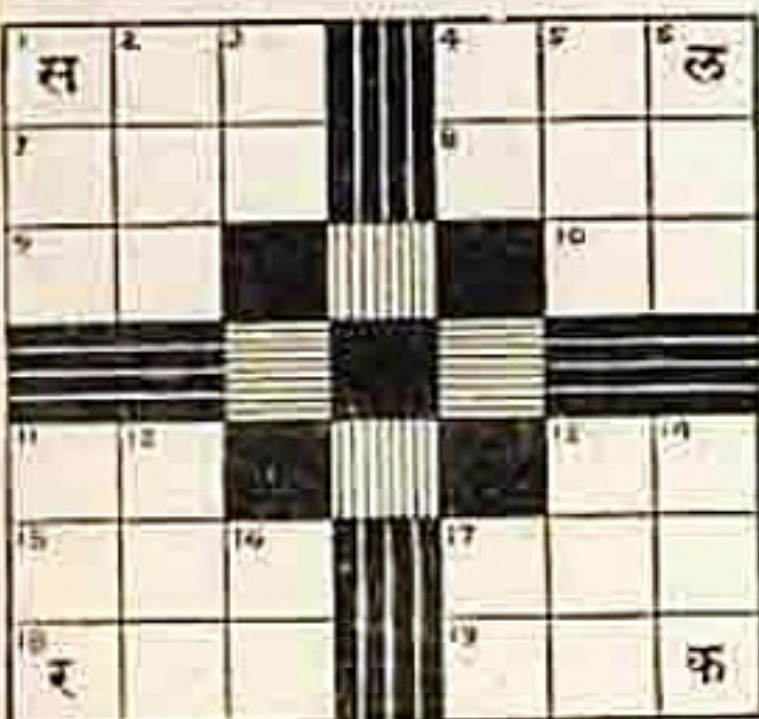
1 स	2	3	■	4	5	6 ल
7			■	8		
9		■	■	■	10	
■	■	■	■	■	■	■
11	12	■	■	■	13	14
15		16	■	17		
18 र			■	19		क

ऊपर से नीचे :

1. सूरज
2. युक्ति
3. झुण्ड
4. पगड़ी
5. दल
6. शौक
11. नौकर
12. रिवाज
14. भाग का छोटा भाग
14. धोबी
16. युद्ध
17. आवाज

फोटो - परिचयोक्ति - प्रतियोगिता

जनवरी - प्रतियोगिता - फल

*

जनवरी के फोटो के लिए निम्नलिखित परिचयोक्तियाँ चुनी गई हैं। इनकी प्रेषिका को १०) का पुरस्कार मिलेगा।

परिचयोक्तियाँ :

पहला फोटो : बाल-खलौने
दूसरा फोटो : खेल-खिलौने

प्रेषिका : मधुरी श्रीवास्तव, जौनपुर

ये पुरस्कृत परिचयोक्तियाँ प्रेषिका के नाम-सहित जनवरी के चन्दामामा में प्रकाशित होंगी। जनवरी के अङ्क के प्रकाशित होते ही पुरस्कार की रकम भेज दी जाएगी।

फरवरी की प्रतियोगिता के लिए बगल के पृष्ठ में देखिए।

एक अनिवार्य सूचना :

परिचयोक्तियाँ सिर्फ कार्ड पर ही भेजी जानी चाहिए। कागज़ पर लिख कर, लिफाफे के अन्दर रख कर भेजी जाने वाली परिचयोक्तियों पर कोई ध्यान न दिया जाएगा।

फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता

फरवरी १९५२ :: पारितोषक १०)

ऊपर के फोटो फरवरी के अङ्क में छापे जाएँगे। इनके लिए उपयुक्त परिचयोक्तियाँ चाहिए।

१. परिचयोक्ति फोटो के उपयुक्त हो।
२. उसमें एक या तीन-चार शब्द से ज्यादा न हों।
३. सबसे प्रधान विषय यह है कि पहले और दूसरे फोटो की परिचयोक्तियों में परस्पर सम्बन्ध हो।
४. एक व्यक्ति परिचयोक्तियों की एक ही जोड़ी भेज सकता है।
५. परिचयोक्तियाँ, पूरे नाम और पते के साथ कार्ड पर लिख कर भेजनी चाहिए।
६. परिचयोक्तियाँ १० दिसम्बर के अन्दर हमें पहुँच जानी चाहिए। उसके बाद आने वाली परिचयोक्तियों की गिनती नहीं होगी।
७. प्राप्त परिचयोक्तियों की सर्वोत्तम जोड़ी के लिए १०) का पुरस्कार दिया जाएगा।

परिचयोक्तियाँ भेजने का पता :

फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता
चन्दामामा प्रकाशन
पोस्ट वडपलनी : मद्रास-२६
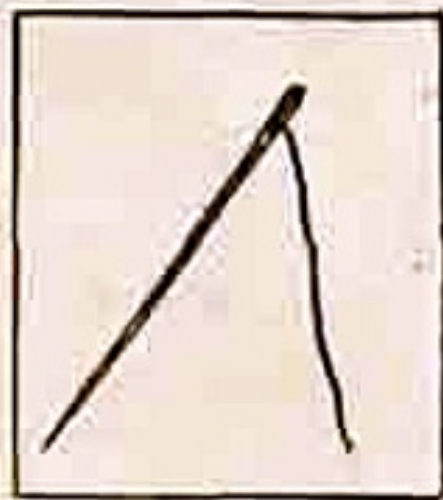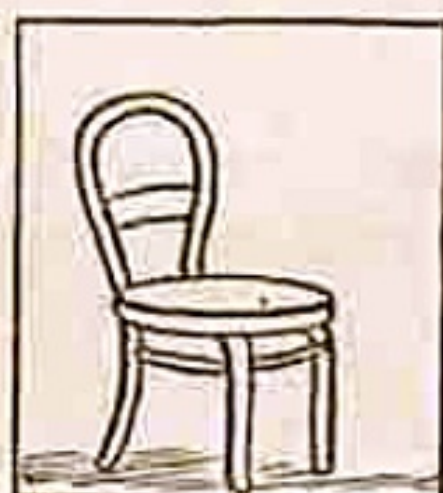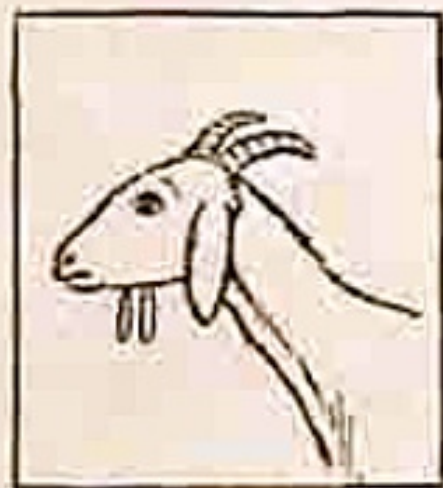
ऊपर भी चित्र हैं। हरेक चित्र में हमारे चित्रकार ने एक-न-एक गलती कर दी है। क्या तुम बता सकते हो कि वे गलतियाँ कौन-कौन सी हैं! नहीं तो चन्दामामा के अगले अंक में देख कर जान लेना।

Photo by R. Ranganathan

पुरस्कृत
परिचयोक्ति

स्वावलम्ब

प्रेषक:
देवीसिंह राजा, महू

रंगीन चित्र-कथा, चित्र – ५